अध्याय VI

वित्तीय स्थिरता

प्रस्तावना

6.1 अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक और विश्व बैंक सहित अनेक केंद्रीय बैंकों और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रकाशित आवधिक वित्तीय स्थिरता रिपोर्टों से यह ज्ञात होता है कि हाल के वर्षों में विश्व भर में वित्तीय स्थिरता पर अधिक ध्यान दिया गया है। वित्तीय स्थिरता की ओर विशेष ध्यान देने का प्रमुख कारण वित्तीय प्रणाली में हुई अनेक महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों का विकसित होना है। अत्यधिक विनियमन और उदारीकरण के साथ होनेवाली प्रौद्योगिकीय प्रगति ने जहाँ एक ओर अनेक जटिल लिखतों और विविधतापूर्ण गतिविधियों के विकास को प्रोत्साहित किया, वहीं दूसरी ओर जोखिमों की गतिशीलता में वृद्धि हुई है[1]। विशेष रूप से ईक्विटी, ऋण, व्युत्पन्न बाजार में तीव्रतर वृद्धि के साथ वास्तविक अर्थव्यवस्था की तुलना में वित्तीय प्रणाली का अत्यधिक उच्चतर गति से विस्तार हुआ है। वित्तीय गंभीरता की प्रक्रिया के साथ वित्तीय व्यवस्था की संरचना में बदलाव आया है जिससे मौद्रिक आस्तियों के हिस्से में गिरावट आयी है और फलस्वरूप मौद्रिक आधार का लीवरेज बढ़ा है। परंपरागत बैंकिंग कार्य जैसे कि जमाराशियां स्वीकार करना और ऋण देना आदि की तुलना में अब वित्तीय संस्थाएं बहु-आयामी कार्य कर रही हैं। प्रौद्योगिकी में प्रगति और एक उद्योग से दूसरे उद्योग तथा एक देश से दूसरे देश के साथ एकीकरण में वृद्धि के कारण वित्तीय व्यवस्था का भी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एकीकरण हो गया है। आज बहुत बड़ी संख्या में वित्तीय समूह भी उभर कर सामने आ गए हैं।

6.2 वित्तीय व्यवस्था की बदलती हुई विभिन्न गतिविधियों ने वित्तीय अस्थिरता के स्रोतों को बढ़ा दिया है। प्रौद्योगिकी नवोन्मेष से संबंधित गतिविधियों, वित्तीय लिखतों की विविधताओं और वित्तीय समूहों के आगमन से संबंधित गतिविधियों ने वित्तीय अस्थिरता की संभाव्य गंभीरता बढ़ा दी है। राष्ट्रीय सीमाओं के बाहर वित्तीय बाज़ारों के एकीकरण के कारण वित्तीय गड़बड़ियों के स्रोतों का पूर्वानुमान लगाना और कठिन हो गया है जिससे इनके संक्रमण की संभावना और भी बढ़ गई है। इस प्रकार वित्तीय अस्थिरता के स्रोत बाह्य कारकों (जैसे कि समष्टि आर्थिक निष्पादन) से राष्ट्रीय/क्षेत्रीय/अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा कारणों से आंतरिक कारकों (जैसेकि समष्टि आर्थिक निष्पादन, बाज़ार की अस्थिरता, काउंटरपार्टी जोखिम तथा परिचालनगत जोखिम). तक बढ़ गए हैं।

6.3 एक स्थिर वित्तीय व्यवस्था भौगोलिक रूप से तथा समय-सीमा के भीतर आर्थिक साधनों का कुशल आबंटन सुनिश्चित करती है। व्यापक परिप्रेक्ष्य में वित्तीय स्थिरता विश्लेषण व्यापक मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं, यथा अर्थव्यवस्था का समष्टि आर्थिक निष्पादन, मौद्रिक स्थिरता, बैंकिग तथा वित्तीय संस्थाओं का विनियमन और पर्यवेक्षण तथा अन्य जोखिम जो कि वित्तीय व्यवस्था को प्रभावित कर सकते हैं। प्रायः ये सभी पहलू एक जटिल तरीके से एक दूसरे से अंतर-संबंधित रहते हैं। अर्थव्यवस्था का समष्टि आर्थिक निष्पादन फर्मों/व्यक्तियों के वित्तीय लेनदेनों हेतु निष्पादित संविदाओं का निर्वाह करने की क्षमता को प्रभावित करता है। दूसरी ओर, वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता एक मजबूत समष्टि आर्थिक गत्यात्मक कार्यों को समर्थन देने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

6.4 व्यावहारिक रूप से वित्तीय स्थिरता में अनेक अंतरसंबंधित घटक सिमटे रहते हैं, जिनमें कि बुनियादी ढाँचा (भुगतान और निपटान प्रणाली, कानूनी व्यवस्था, और लेखांकन प्रणालियां), संस्थाएं (बैंक, प्रतिभूति फर्म और संस्थागत निवेशक) और बाज़ार (स्टॉक, बांड, करेंसी, मुद्रा और व्युत्पन्नी) आदि सम्मिलित होते हैं।वित्तीय स्थिरता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वित्तीय व्यवस्था के सभी अंग हमेशा सुचारु रूप से कार्य करते रहें। एक स्थिर वित्तीय व्यवस्था में यह क्षमता होती है कि वह स्व-सुधारक तंत्र के जरिए कोई भी संकट आने के पहले ही उन असंतुलनों को ठीक कर ले ।

6.5 बढ़े हुए वैश्वीकरण तथा वित्तीय बाज़ारों के एकीकरण के साथ ही इन बाजारों में अस्थिरता के उभरते संकेतों के कारण वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने हेतु सुनियोजित प्रयासों की आवश्यकता हाल में बढ़ गई है। यद्यपि वैश्वीकरण से कई अर्थव्यवस्थाओं का संभावित उत्पादन बढ़ गया है, वहीं दूसरी ओर अंतर्राष्ट्रीय पूंजी प्रवाह के अस्थिर वातावरण में वित्तीय वैश्वीकरण से लाभ ले सकने की विकासशील देशों की क्षमता, समष्टि आर्थिक ढाँचे और संस्थाओं की गुणवत्ता के जरिये उल्लेखनीय रूप से बढ़ायी जा सकती है।

[1] चिनासी, जी जे (2006) : सेफगार्डिंग फाइनेंसियल स्टेबिलिटी : थियरी एंड प्रैक्टिस; इंटरनेशनल मोनेटरी फंड।

6.6 प्रौद्योगिकी के विकास ने भी वित्तीय स्थिरता के लिए समस्याएं खड़ी कर दी हैं। अभी हाल के समय में, विभिन्न वित्तीय कारोबारी क्षेत्रों में अभिसरण की प्रवृत्ति देखी गयी है तथा अभिसरण का अधिकांश भाग बैंकिंग क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। तेजी से हो रहे प्रौद्योगिकीय विकासों और ग्राहकों की बदलती पसन्द ने बैंकिंग क्षेत्र में सुपुर्दगी चैनेल के स्वरूप को रूपांतरित कर दिया है, ताकि वे प्रतिस्पर्धी रह सकें। तत्काल ग्राहक सेवा हेतु इंटरनेट आधारित सुपुर्दगी सेवाएं तथा मोबाइल टेलीफोनी संभाव्य माध्यम के रूप में उभरी हैं। कई फायदों के बावजूद प्रौद्योगिकीय विकास के फलस्वरूप वित्तीय कांग्लोमरेट को अस्तित्व में आने का अवसर मिला है और बड़े पैमाने के लाभ भी मिले हैं। बड़े वित्तीय कांग्लोमरेट और विदेशी संस्थाओं की गतिविधियों के साथ स्थानीय सार्वजनिक नीतिगत प्राथमिकताओं का जुड़ना अनेक नई उभर रही एशियाई अर्थव्यवस्थाओं के आंतरिक वित्तीय विनियामकों के लिए चुनौती है। प्रौद्योगिकीय विकास के कारण बैंक तथा वित्तीय सस्थाएं काफी हद तक आउटसोर्सिंग पर निर्भर रहने लगी हैं। बैंकों द्वारा आउटसोर्सिंग सेवाएं देने वाली संस्थाओं के प्रबंधन का महत्व काफी बढ़ गया है। वित्तीय स्थिरता के संदर्भ में यह अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है कि आउट-सोर्सिंग की प्रक्रिया में पर्याप्त रक्षोपाय अपनाए जाएं तथा सूचना की गोपनीयता बनाये रखने के लिए समुचित उपाय किए जाएं।

6.7 वित्तीय अस्थिरता की घटनाएं प्राय: फर्मों तथा घरेलू परिवारों सहित समाज के एक बहुत बड़े वर्ग पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। कुल मिलाकर, प्राय: सीमा पार से फैलायी जाने वाली इस प्रकार की घटनाओं की कुल लागत किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए काफी भारी पड़ती है। 1990 के दशक के मध्य में ईस्ट एशियन संकट से साफ पता चलता है कि अर्थव्यवस्था में वित्तीय क्षेत्र की कमजोरी के गंभीर आर्थिक और सामाजिक परिणाम होते हैं। वित्तीय बाजारों की अत्यधिक अस्थिरता, कारोबारी निवेश की पूंजीगत लागत में बहुत ज्यादा वृद्धि कर सकती है और उत्पादन वृद्धि पर यह प्रतिकूल प्रभाव डालती है। कमजोर वित्तीय क्षेत्र भी मौद्रिक संप्रेषण प्रक्रिया में उस समय अड़चन पैदा कर सकता है जब केंद्रीय बैंक द्वारा अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के प्रयास किये जा रहे हों।

6.8 इसकी गंभीरता को ध्यान में रखते हुए विश्व भर के नीति निर्माता वित्तीय स्थिरता के जोखिमों को लेकर बहुत ज्यादा चिंतित रहे हैं। अधिकांश देशों में वित्तीय क्षेत्र की सुदृढ़ता का मूल दायित्व मौद्रिक प्राधिकरण पर रहता है, क्योंकि मौद्रिक स्थिरता का गहन संबंध वित्तीय स्थिरता के साथ है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक का प्रमुख उद्देश्य मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता को बढ़ावा देना है। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक के भीतर वित्तीय-पर्यवेक्षण और निगरानी क्षेत्र में सूचना के आदान-प्रदान और अंतरराष्ट्रीय सहकारिता के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय स्थिरता को बढ़ाने हेतु अप्रैल 1999 में एक वित्तीय स्थिरता फोरम का गठन किया गया (बॉक्स VI.1)। यह फोरम वित्तीय स्थिरता के लिए उत्तरदायी राष्ट्रीय प्राधिकारियों को नियमित आधार पर विचार विमर्श हेतु एक मंच पर लाता है।

6.9 1990 के दशक के आर्थिक संकट की प्रतिक्रियास्वरूप, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक ने अपने सदस्य देशों की वित्तीय प्रणालियों की शक्तियों, जोखिमों और अतिसंवेदनशीलता का पता लगाने और इसके साथ ही वित्तीय क्षेत्र के विकास की जरूरतों को उजागर करने के लिए वित्तीय क्षेत्र आकलन कार्यक्रम शुरू किया। वित्तीय क्षेत्र में अन्तरराष्ट्रीय मानक और संहिताओं के अनुसार अनुपालन का आकलन करने में वित्तीय क्षेत्र आकलन कार्यक्रम के प्रमुख घटक है, जिसमें ये शामिल हैं : बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल के मुख्य सिद्धांत, अंतरराष्ट्रीय बीमा पर्यवेक्षक संघ द्वारा बनाए गए मुख्य बीमा सिद्धांत, प्रतिभूति विनियमन के लिए अंतरराष्ट्रीय प्रतिभूति संगठन संघ के सिद्धांत और उद्देश्य, मौद्रिक और वित्तीय नीतियों में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की सुप्रथाओं की संहिता, धन-शोधन निवारक और आतंकवाद के वित्त-पोषण के विरुद्ध वित्तीय कार्रवाई कार्यदल की सिफारिशें।

6.10 भारत के संदर्भ में, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम,1934 में स्पष्ट अधिदेश नहीं हैं कि भारतीय रिज़र्व बैंक वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करे। तथापि, वर्षों से विकसित भारत की मौद्रिक नीति के दो उद्देश्य हैं - मूल्य स्थिरता बनाए रखना तथा वृद्धि की प्रक्रिया को सुगम बनाने हेतु पर्याप्त ऋण प्रवाह सुनिश्चित करना (रेड्डी, 2007)। इस दोहरे उद्देश्य के बीच सापेक्ष्य बल को तत्कालीन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अनुकूलित किया जाता है और भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा समय-समय पर मौद्रिक नीति वक्तव्य में उल्लेख किया जाता है। समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थिरता संबंधी विचार को भी अधिदेश में शामिल किया जाता है। हाल के वर्षों में ऐसा लगता है कि मौद्रिक नीति लागू करने में वित्तीय स्थिरता को प्राथमिकता प्रदान दी गई है। वैश्विक बाज़ारों के साथ घरेलू वित्तीय बाज़ारों के बढ़े हुए एकीकरण और विशेष रूप से, राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंधन अधिनियम, 2003 लागू होने से संस्थागत परिवेश में तेजी से बदलाव आ रहा है। इस संदर्भ में, यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि समष्टि आर्थिक निष्पादन और वित्तीय स्थिरता के बीच मज़बूती की पहचान की जाए और उसका भरपूर लाभ उठाया जाए।

बॉक्स VI.I: अत्यंत लीवरेज वाली संस्थाओं के बारे में वित्तीय स्थिरता फोरम की रिपोर्ट - अद्यतन स्थिति

वित्तीय स्थिरता फोरम राष्ट्रीय वित्तीय प्राधिकरणों (केंद्रीय बैंकों, पर्यवेक्षी प्राधिकरणों और कोषागार विभागों), अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं, अंतर्राष्ट्रीय विनियामक और पर्यवेक्षी समूहों, केंद्रीय बैंकों के विशेषज्ञों की समितियों तथा यूरोपीय सेंट्रल बैंक के वरिष्ठ प्रतिनिधियों को एक मंच पर जुटाता है। वित्तीय स्थिरता फोरम का कामकाज बासेल, स्विटजरलैण्ड स्थित अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक में छोटे से सचिवालय द्वारा किया जाता है। वित्तीय स्थिरता फोरम अंतरराष्ट्रीय वित्तीय स्थिरता को प्रोन्नत करने , बाजारों की कार्य पद्धति सुधारने और प्रणालीगत जोखिम को कम करने के लिए इन विभिन्न संस्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करता है।

वित्तीय स्थिरता फोरम ने वर्ष 1999 में भारी मात्रा में ऋण लेने वाली संस्थाओं द्वारा उत्पन्न की जा रही चुनौतियों के आकलन हेतु एक अध्ययन दल गठित किया। अध्ययन दल का दायित्व था कि वह इन संस्थाओं की विघटनकारी शक्ति को न्यूनतम करने हेतु पर्यवेक्षी/विनियामक उपायों की सर्वसम्मति प्राप्त करे। अध्ययन दल के गठन के बाद दो मुख्य घटनाएं घटीं। उनमें से पहली घटना थी, दीर्घकालीन प्रबंध (एलटीसीएम) का पतन के कगार पर आ जाना , जिसने भारी मात्रा में ऋण लेने वाली संस्थाओं (एचएलआइ) द्वारा उत्पन्न की जाने वाली प्रणालीगत सशक्त जोखिमों को लेकर चिंता बढ़ा दी। दूसरी घटना थी कि एशिया और रूस की 1997-98 के संकट से उपजी स्थिति जिसमें छोटी तथा मध्यम आकार की कुछ खुली अर्थव्यवस्थाओं के प्राधिकरण इस बात से चिंतित थे कि भारी मात्रा में ऋण लेने वाली संस्थाओं द्वारा उनके बाजारों में विघटनकारी प्रभाव लाने के प्रयास किए गए हैं। अध्ययन दल ने वर्ष 2000 में प्रस्तुत अपनी पहली रिपोर्ट में, अन्य बातों के साथ-साथ, ताकतवर काउंटरपार्टी जोखिम, भारी मात्रा में ऋण देने वाली संस्थाओं के ऋण प्रदाताओं का अधिक विनियामक पर्यवेक्षण, बैंक पूँजी पर्याप्तता विनियमन में गुरुतर जोखिम संवेदनशीलता और वित्तीय बाजारों की बढ़ी हुई राष्ट्रीय निगरानी शामिल करते हुए 10 सिफारिशें कीं। वित्तीय स्थिरता फोरम ने 2001 और 2002 में इन सिफारिशों के अनुपालन में हुई प्रगति के आकलन के बाद एक विस्तृत रिपोर्ट जारी की।

19 मई 2007 को जी-7 देशों के वित्त मंत्रियों और केंद्रीय बैंकों के गवर्नरों के अनुरोध पर जारी ज़रिपोर्ट ऑन हाइली लीवरेज इंस्टिट्यूशन्सट (2000) के नवीनतम संस्करण में वित्तीय स्थिरता फोरम द्वारा बचाव निधियों के कारण होने वाले वित्तीय स्थिरता मुद्दों और प्रणालीगत जोखिम का पुनराकलन किया गया। रिपोर्ट में बचाव निधियों द्वारा वित्तीय नवोन्मेष और बाजार की चलनिधि में किये गए अंशदान को स्वीकार किया गया है साथ ही, इसने बाजार के सहभागियों के लिए अत्यधिक जोखिम माप, मूल्यन और परिचालनात्मक चुनौतियों को नोट करते हुए निम्नलिखित सिफारिशें कीं :-

- पर्यवेक्षकों को अपना कार्य इस प्रकार करना चाहिये कि मुख्य मध्यवर्ती संस्थाएं अपनी काउंटरपार्टी जोखिम प्रबंध प्रथाओं को लगातार मजबूत बनाती रहें।
- बाजार तरलता में संभावित ह्रास रोकने हेतु मुख्य मध्यवर्ती संस्थाओं की ताकत को और अधिक मजबूत बनाने के लिए पर्यवेक्षकों को उनके साथ कार्य करना चाहिये।
- पर्यवेक्षकों को चाहिये कि वे उस सीमा तक छानबीन और मूल्यांकन करें जहाँ तक बचाव निधियों के प्रति मुख्य मध्यस्थियों के समेकित काउंटरपार्टी एक्सपोजर संबंधी अधिक प्रणालीगत और सुसंगत आंकड़े तैयार करना मौजूदा पर्यवेक्षी प्रभावों का प्रभावी अनुपूरक होगा।
- काउंटरपार्टियों और निवेशकों को पोर्टफोलियो मूल्यांकन तथा जोखिम की सही-सही और नियत समय पर जानकारी प्राप्त करने के साथ बाजार अनुशासन को मजबूत बनाने की दिशा में कार्य करना चाहिये।
- वैश्विक बचाव निधि उद्योग को चाहिए कि वह शासकीय और निजी क्षेत्रों द्वारा निर्धारित सुधरी प्रथाओं की प्रत्याशा में बचाव निधि प्रबंधकों के लिए उन्नत प्रथा बेंचमार्कों की समीक्षा और संवृद्धि करे।

संदर्भ :

वित्तीय स्थिरता फोरम (2007), उच्च लीवरेज प्राप्त संस्थाओं की एफ एस एफ रिपोर्ट मई अद्यतन बनाना www.fsf.org.

6.11 भारत में सुरक्षित,मज़बूत और कार्य-कुशल वित्तीय प्रणाली विकसित करने के उद्देश्य से अपनी ज़रूरतों के हिसाब से सर्वश्रेष्ठ अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं को अपनाया गया है। 2001 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक के वित्तीय क्षेत्र आकलन कार्यक्रम (एफएसएपी) के शुरुआती दौर में एक सदस्य देश की स्वैच्छिक सहभागिता के साथ ही भारत ने भी अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय मानदंडों और संहिताओं संबंधी सभी क्षेत्रों के लिए गठित समिति (डॉ. वाई.वी. रेड्डी की अध्यक्षता में गठित) द्वारा स्व-मूल्यांकन करवाया। 2001 के वित्तीय क्षेत्र आकलन कार्यक्रम (एफएसएपी) से प्राप्त अनुभवों और सितंबर 2005 में विश्व बैंक तथा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा संयुक्त रूप से प्रकाशित 'हैंडबुक ऑन फाइनेंशियल सेक्टर असेसमेंट' नामक पुस्तिका में निहित विश्लेषणात्मक ब्यौरों की उपयोगिता और आज के समय में उनकी प्रासंगिकता की पहचान करके भारत सरकार ने भारतीय रिज़र्व बैंक के परामर्श से वित्तीय क्षेत्र का व्यापक स्व-मूल्यांकन करवाने का निश्चय किया। तदनुसार सितंबर 2006 में वित्तीय क्षेत्र आकलन समितिड का गठन (डॉ. राकेश मोहन - अध्यक्ष और डॉ. डी. सुब्बाराव, सह-अध्यक्ष) किया गया।

6.12 यद्यपि राष्ट्रीय प्राधिकरणों और अंतरराष्ट्रीय संगठनों द्वारा वित्तीय स्थिरता के महत्व को स्वीकार किया गया है, वहीं वित्तीय विनियमन में उचित संतुलन बैठाने की कठिनाइयों को भी नोट किया गया है। जहाँ एक तरफ प्रणालीगत किसी जोखिम से बचने के लिए एक कारगर विनियामक पर्यवेक्षण की ज़रूरत हैं, वहीं आवश्यकता इस बात की भी है कि ऐसा परिवेश उपलब्ध हो जिसमें प्रतिस्पर्धा और नवोन्मेषण को समाहित करने की क्षमता हो। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय जगत और नवोन्मेषण में तेजी से आ रहे बदलावों से विनियामकों के लिए यह कठिन हो गया है कि वे विनियामक सुरक्षा उपाय तथा प्रतिस्पर्धी परिवेश के बीच किस प्रकार संतुलन कायम रखें। इस विभ्रम की स्थिति को ध्यान में रखते हुए, भारतीय रिज़र्व बैंक ने भारत में वित्तीय संस्थानों को मज़बूती प्रदान करने के इरादे से अनेक नीतिगत उपाय किए। इसके साथ ही वित्तीय क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा को भी बढ़ावा मिला। इस अध्याय के खंड-2 में वाणिज्यिक और सहकारी बैंकों, वित्तीय संस्थानों और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों से संबंधित इन्हीं उपायों का उल्लेख किया गया है। खंड-3 में भारतीय अनुसूचित वाणिज्य

बैंकों और चुनिंदा देशों के बैंकों के बीच परिचालनगत दक्षता और वित्तीय सुदृढ़ता संकेतकों के संबंध में एक तुलनात्मक स्थिति दी गई है। खंड-4 में वित्तीय स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में वित्तीय-बाज़ारों की गतिविधियों का चित्रण है। खंड-5 में भुगतान और निपटान प्रणाली की प्रगति और खंड-6 में वित्तीय स्थिरता के कुछ जोखिमों का हवाला दिया गया है। खंड-7 में भारत में वित्तीय स्थिरता के समग्र मूल्यांकन की चर्चा है।

2. वित्तीय संस्थाओं का सुदृढ़ीकरण

6.13 वित्तीय संस्थाओं का लचीलापन वित्तीय स्थिरता की सबसे पहली अपेक्षा है। व्यावहारिक हिसाब से उसका अर्थ यह है कि बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाओं में आघात झेलने की ऐसी क्षमता होनी चाहिए कि इस के कारण वित्तीय मध्यस्थता प्रक्रिया में किसी प्रकार का व्यवधान न आने पाए। इस संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि कोई बैंक दिवालिया हो जाए, यह भी हो सकता है कि प्रणाली को आघात पहुँचने पर भी वित्तीय संस्थाएं संपूर्ण अर्थव्यवस्था में समग्र रूप से मध्यस्थता की अपनी भूमिका निभा पाएं। इसीलिए वित्तीय विनियामकों और पर्यवक्षकों ने वित्तीय संस्थाओं द्वारा पालन किये जाने वाले मानदंड, मानक और दिशा-निर्देश निर्धारित किए हैं ताकि प्रतिस्पर्धी ताकतें इन संस्थाओं की वित्तीय सुदृढ़ता और लचीलापन निर्धारित करनेवाली आधारभूत ताकत को कमजोर न कर दें।

6.14 भारत में वित्तीय प्रणाली में बड़ी संख्या में वित्तीय संस्थाएं और वित्तीय बाजार आते हैं जो समाज के विभिन घटकों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। रिज़र्व बैंक की विनियामक परिधि के अंतर्गत वित्तीय संस्थाओं में वाणिज्य बैंक, शहरी सहकारी बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, वित्तीय संस्थाएं और बैंकिंग से भिन्न वित्तीय कंपनियां शामिल हैं। ये वित्तीय संस्थाएं न केवल उनके कंपनी स्वरूप, आकार, निधि के स्रोत के अनुसार बल्कि दिए जाने वाले ऋण और लक्षित ग्राहकों के अनुसार भी भिन्न हैं। ये संस्थाएं वित्तीय और सुदृढ़ता संकेतकों के संदर्भ में भी भिन्न हैं। इसके अलावा, संस्थाओं के विभिन्न सेटों पर रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी अधिकारों में भी भिन्नता है। विनियामक और पर्यवेक्षी प्राधिकारियों की बहुलता से भी भारतीय वित्तीय प्रणाली की जटिलता बढ़ गई है। शहरी सहकारी बैंकों सहित बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण का दायित्व बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अंतर्गत भारतीय रिज़र्व बैंक को सौंपा गया है। तथापि, शहरी सहकारी बैंक राज्य सरकारों द्वारा भी विनियमित किए जाते हैं (एक ही राज्य में कार्यरत शहरी सहकारी बैंकों के मामले में सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के द्वारा तथा एक से अधिक राज्यों में कार्यरत शहरी सहकारी बैंकों के मामले में सहकारी समितियों के मध्यवर्ती रजिस्ट्रार द्वारा)। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 भी भारतीय रिज़र्व बैंक को वित्तीय संस्थानों के विनियम का अधिकार प्रदान करता है। 1997 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन करते हुए गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के संबंध में एक व्यापक विनियमन ढाँचा लागू कर दिया गया है। राज्य और जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंकों और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का विनियमन भारतीय रिज़र्व बैंक करता है जबकि उसके पर्यवेक्षण का कार्य राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा किया जाता है।

6.15 वित्तीय प्रणाली के मुख्य भाग के विनियामक के रूप में, रिज़र्व बैंक के लिए वित्तीय संस्थाओं के सभी पहलुओं पर निगरानी रखना अनिवार्य है जिसमें उनके तुलनपत्र, लाभप्रदता, अनर्जक ऋण और पूँजी पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाएं शामिल हैं। अतः रिज़र्व बैंक वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहित करने के अपने निरंतर प्रयासों के एक भाग के रूप में वित्तीय क्षेत्र के लचीलेपन को बढ़ावा देने और अपने अधिकार क्षेत्र की वित्तीय संस्थाओं को मजबूत बनाने के लिए अनेक पहल करता आ रहा है। तथापि, रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी पहल के फोकस को सावधानी से अंशशोधित किया गया है।

6.16 साथ ही, नयी जोखिम प्रबंधन प्रणालियों को लागू करते, वर्तमान को अपग्रेड करते तथा जोखिम प्रबंधन उत्पादों के लिए नये बाजार विकसित करते समय रिज़र्व बैंक को भारत में मौजूद वस्तुनिष्ठ स्थितियों को भी हिसाब में लेना है। देश के विभिन्न आर्थिक एजेंटों के बीच जोखिम उठाने की अलग-अलग क्षमताओं को हमेशा ध्यान में रखा जाना है। विभिन्न वित्तीय मध्यस्थों के बीच भी, अकेले घरेलू और किसान को ले लें तो भी, छोटी और व्यापक रूप से बिखरी संस्थाएं मौजूद हैं यथा प्राथमिक कृषि ऋण समिति, ग्रामीण और शहरी सहकारी बैंक, सरकारी क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के नये बैंक तथा विदेशी बैंक तथा सभी के पास जोखिम प्रबंधन संबंधी अलग-अलग मात्रा का परिस्करण है। अतः देश में आधुनिक जोखिम प्रबंधन लिखतों और प्रणालियों को लागू करने के प्रति, रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण बलात देश की अपेक्षाओं एवं क्षमता से अवगत होकर बनाया जाना है। [2]

[2] मोहन, राकेश (2007), खुली बाजार अर्थव्यवस्था में जोखिम प्रबंधन, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, जुलाई।

अनुसूचित वाणिज्य बैंक

6.17 पहले संकेत किये अनुसार, भारत में अनेक प्रकार की वित्तीय संस्थाएं मौजूद हैं। चूँकि अनुसूचित वाणिज्य बैंक भारतीय वित्तीय प्रणाली का प्रणालीगत रूप में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण खंड हैं; आरंभिक वर्षों में सुधार का फोकस वित्तीय स्थिरता का संवर्धन करने की दृष्टि से वाणिज्य बैंकों को सुदृढ़ करने पर था। वाणिज्य बैंकों को सशक्त करने के लिए 1990 के दशक के प्रारंभ से शुरू किए गए उपायों में आय निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण प्रावधानीकरण, पूँजी पर्याप्तता, संबंधी विवेकपूर्ण मानदण्ड, एक्सपोजर मानदंड; अनर्जक आस्तियों के प्रबंधन में संस्थागत व्यवस्था बनाने, पूँजी बाजार से 49 प्रतिशत तक पूँजी जुटाने की सरकारी क्षेत्र के बैंकों को अनुमति, निजी क्षेत्र के नये बैंकों को प्रवेश की अनुमति तथा वित्तीय संस्थाओं की क्षमता में सुधार लाने के लिए विदेशी बैंकों के प्रवेश को उदार बनाना, स्वामियों, निदेशकों और निजी क्षेत्र के बैंकों के प्रबंधन के लिए ञ्उपयुक्त और उचितट मानदण्ड सहित कंपनी अभिशासन मानदंडों को सुदृढ़ करना शामिल हैं। जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (प्रायोगिक आधार पर) लागू करके, तुरंत सुधारात्मक कार्रवाई प्रक्रिया बनाकर, वित्तीय सुदृढ़ता संकेतकों के संकलन तथा सशक्त वित्तीय संस्थाओं के साथ कमजोर वित्तीय संस्थाओं के विलय को प्रोत्साहित करके पर्यवेक्षी प्रक्रिया को भी सुदृढ़ किया गया है। उपयुक्त जोखिम प्रबंधन प्रथाओं को भी लागू किया गया है। वाणिज्य बैंकों पर इन सभी उपायों का गहरा प्रभाव पड़ा है तथा कुछ वर्षों में वाणिज्य बैंक क्षेत्र सुदृढ़ हुआ है। तथापि, साथ ही, कुछ नयी चुनौतियां उभरकर सामने आयी हैं। बासेल II में कारगर तरीके से अंतरण हुआ है, बासेल II की अपेक्षाएं पूरी करने के लिए बैंकों द्वारा पूँजी जुटायी गयी है तथा ऋण में तीव्र वृद्धि को देखते हुए आस्ति गुणवत्ता बनायी रखी गयी है। इन चुनौतियों को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक ने 2006-07 में कई उपाय किये।

समष्टि स्तर के उपाय

6.18 आरक्षित निधि आवश्यकता की शर्त पारंपरिक रूप से मौद्रिक नीति का प्रमुख साधन रही है। इन साधनों के प्रयोग में अधिक लचीलापन केंद्रीय बैंक को मौद्रिक स्थिरता सुनिश्चित करने में अधिक युक्तियां प्रदान करता है। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 24 के संशोधन में, जो 23 जनवरी 2007 से प्रभावी हुआ, सांविधिक चलनिधि अनुपात के लिए 25 प्रतिशत की न्यूनतम सीमा को हटा दिया गया है जिससे एस एल आर अपेक्षा को तय करने में रिज़र्व बैंक को और अधिक लचीलापन मिला है। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के संशोधन द्वारा, जो 1 अप्रैल 2007 को प्रभावी हुआ, नकदी आरक्षित अनुपात की न्यूनतम और अधिकतम सीमा को हटा दिया गया है और रिज़र्व बैंक को शक्ति प्रदान की गई है कि वह प्रचलित मौद्रिक दशाओं के अनुसार नकदी आरक्षित निधि अनुपात निर्धारित करे।

विवेकपूर्ण उपाय

6.19 बैंकिंग और पर्यवेक्षण पर बासेल समिति के संशोधित पूँजी पर्याप्तता ढाँचे का अनुसरण करते हुए भारत में संशोधित ढाँचा लागू करने के लिए अंतिम दिशानिर्देश बैंकों को अप्रैल 2007 में जारी किए गए। बासेल II के ढांचे में कारगर रूप से अंतरण के लिए बढ़ी हुई पूंजी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए बैंकों को जनवरी 2006 में यह अनुमति दी गई थी कि वे टियर-I पूंजी के रूप में समावेशन के पात्र नवोन्मेषी बेमीयादी लिखतों (आइ पी डी आइ) तथा अपर टियर-II पूंजी के रूप में समावेशन के लिए पात्र ऋण पूंजी लिखतों के निर्गमन के जरिये अपनी पूंजीगत निधियां बढ़ाएं। जुलाई 2006 में दिशा-निर्देशों की समीक्षा की गई और बैंकों को सूचित किया गया कि बैंक द्वारा आइपीडीआइ के जरिए प्राप्त कुल राशि को आरक्षित निधियों की आवश्यकता के लिए शुद्ध मांग और मीयादी देयता की गणना हेतु देयताओं के रूप में शामिल न की जाए और इस प्रकार इन पर सीआरआर/ एसएलआर अपेक्षाएं लागू नहीं होंगी। विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा नवोन्मेषी बेमीयादी ऋण लिखतों में भारतीय-रुपयों में निवेश, कंपनी ऋण लिखत में एफएफआइ द्वारा निवेश के लिए निर्धारित रुपया मूल्य-वर्गीकृत कंपनी ऋण हेतु, बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी) की परिधि से बाहर रहेंगे।

6.20 टियर-I और अपर टियर-II पूंजी जुटाने के लिए भारतीय बैंकों को लिखतों के कई विकल्प उपलब्ध कराने के प्रयोजनार्थ उन्हें 29 अक्तूबर 2007 को विनियामक पूंजी के भाग के रूप में अधिमान शेयर जारी करने के लिए दिशा-निर्देश जारी किए गए। ये निर्णय लिया गया है कि बैंकों को भारतीय रुपयों में निम्नलिखित अधिमान शेयर जारी करने की अनुमति दी जाए: i) टियर-I पूंजी के अंतर्गत शास्वत असंचयी अधिमान शेयर (पीएनसीपीएस): तथा ii) अपर टियर - II पूंजी के अंतर्गत शास्वत संचयी अधिमान शेयर (पीसीपीएस), मोचनीय असंचयी अधिमान शेयर (आरएनसीपीएस) और मोचनीय संचयी अधिमान शेयर (आरसीपीएस)। उक्त लिखतों को बढ़ाने से ये आशा की जाती है कि पूंजी पर्याप्तता के प्रयोजन के लिए बैंकों को उपलब्ध पात्र लिखतों के रेंज में उल्लेखनीय वृद्धि होगी।

6.21 वित्तीय स्थिरता पर बैंकों के निवेश के तरीकों से उत्पन्न जटिलताओं को देखते हुए तथा बैंकों को जोखिम भरे निवेशों की ओर बढ़ने से हतोत्साहित करने के उद्देश्य से सितंबर 2006 में

बैंकों को सूचित किया गया था कि विशेष आर्थिक क्षेत्र स्थापित करने वाली संस्थाओं अथवा विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज), जिसमें भू-संपदा सम्मिलित है, की इकाइयों का अधिग्रहण करने वाली संस्थाओं में बैंकों के एक्सपोजर को वाणिज्यिक भू-संपदा क्षेत्र में किया गया एक्सपोजर माना जायेगा और उन्हें इस प्रयोजन हेतु निर्धारित दिशा-निर्देशों के अनुसार ऐसे एक्सपोजरों के लिए प्रावधान करना होगा तथा उचित भारांक देना होगा।

6.22 बैंकों द्वारा उद्यम के लिए पूँजी निधि (वीसीएफ) में एक्सपोजर में अंतर्निहित गंभीर जोखिमों को ध्यान में रखते हुए 23 अगस्त 2006 को बैंकों द्वारा उद्यम के लिए पूँजी निधि (वीसीएफ) में एक्सपोजर हेतु निर्धारित विवेकसम्मत दिशा-निर्देशों के ढाँचे में संशोधन किया गया। तदनुसार उद्यम के लिए पूँजी निधि (वीसीएफ) के सभी एक्सपोजर (पंजीकृत /अपंजीकृत दोनों) ईक्विटी के समतुल्य माने जायेंगे और इसलिए पूँजी बाजार निवेश सीमा (ईक्विटी से संबद्ध लिखतों में सीधे निवेश तथा समग्र पूँजी बाजार एक्सपोजर की सीमा) अनुपालन हेतु इनकी गणना की जायेगी और ऐसे एक्सपोजर हेतु निर्धारित सीमा उद्यम के लिए पूँजी निधि (वीसीएफ) के निवेशों पर भी लागू होगी। बैंक के पोर्टफोलियो में कोट किए हुए ईक्विटी शेयर/बांड/वीसीएफ की इकाइयां 'बिक्री के लिए उपलब्ध' श्रेणी में और दैनिक आधार पर अधिमानतः मार्क्ड-टू-मार्केट में रखी जाएं और जारी अनुदेशों के अनुसार अन्य ईक्विटी शेयरों के लिए मूल्यांकन मानदंडों की भाँति कम से कम साप्ताहिक आधार पर उनके मूल्य अंकित किए जाएं। ये दिशा-निर्देश जारी किए जाने के बाद कोट न किए हुए ईक्विटी शेयर/बांड/वीसीएफ की इकाइयों में बैंकों के निवेशों को शुरू के तीन वर्षों के लिए 'परिपक्वता तक धारित' श्रेणी में रखा जाए और इस अवधि में लागत पर इनका मूल्यांकन किया जाए । इन पर जोखिम भार 150 प्रतिशत रखा जाएगा।

6.23 वित्तीय स्थिरता के दृष्टिकोण से बैंकों के देयता पक्ष के संकेन्द्रण जोखिम को नियंत्रित करना आस्ति पक्ष के संकेन्द्रण जोखिम जितना ही महत्वपूर्ण है। विशेष रूप से, अनियंत्रित अंतर-बैंक देयताओं का प्रभाव प्रणालीगत हो सकता है, भले ही अलग-अलग काउंटरपार्टी बैंक आबंटित एक्सपोजर के भीतर हों।किसी बड़े बैंक की अनियंत्रित देयता का भी ज्डोमिनों प्रभाव पड़ सकताट है। यदि कुल अंतर बैंक देयता स्तर बहुत अधिक है तो तरलता समापन की प्रक्रिया, अन्यथा अपेक्षित की तुलना में, अधिक तीव्र हो सकती है। इस परिप्रेक्ष्य में मार्च 2007 में देयता प्रबंधन की एक व्यापक रूपरेखा लागू की गई थी, ताकि बहुत बड़ी राशि की अंतर बैंक देयता पर आधारित कारोबारी मॉडल का अनुसरण करने वाले बैंकों को ऐसे मॉडलों में अंतर्निहित जोखिमों की तथा ऐसे मॉडलों में निहित प्रणालीगत जोखिमों की जानकारी हो सके। बैंकों को सूचित किया गया था कि वे अपने कारोबारी मॉडल को देखते हुए, पिछले वर्ष 31 मार्च तक की स्थिति के अंकेक्षित तुलन पत्र में दर्शायी गयी निवल मालियत की 200 प्रतिशत की विवेकपूर्ण सीमा के भीतर अपने निदेशक मंडल के अनुमोदन से अपनी अंतर-बैंक देयताओं की एक उपयुक्त सीमा निर्धारित करें। पिछले वर्ष की 31 मार्च के अंकेक्षित तुलन पत्र में 11.25 प्रतिशत से अधिक सीआरएआर वाले बैंकों को 100 प्रतिशत बिंदु की अर्थात् उनकी निवल मालियत से 300 प्रतिशत तक की अतिरिक्त सीमा रखने की अनुमति दी गई है।

6.24 बैंक का ऋण और अग्रिम पोर्टफोलियो एक विशेष प्रकार के चक्रीय क्रम का अनुसरण करता है अर्थात् उसका विस्तार प्रसरणशीलता के दौर में तेजी से ऊपर उठता है और मंदी के दौर में नीचे गिरता है। प्रसरणशील चरण तथा त्वरित ऋण वृद्धि के दौर में बैंक सामान्यतया अंतर्निहित जोखिम के स्तर को गंभीरता से नहीं लेते और मंदी के दौर में इसका उल्टा होता है। विवेकपूर्ण अपेक्षाओं के प्रावधान द्वारा इस प्रवृत्ति पर कारगर ढंग से अंकुश नहीं लगाया जा सका क्योंकि वे यथार्थ जोखिमों पर अंकुश लगाते हैं न कि प्रत्याशित जोखिमों पर। अतः यह आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था में मंदी अथवा बाद में ऋण कमजोरियों की स्थिति में बैंकों के तुलनपत्र में गुंजाइश का प्रावधान किया जाए।

6.25 लगातार 3 वर्ष के दौरान (2004-07) ऋण की तीव्र वृद्धि, विशेषतः भूसंपदा क्षेत्र में उच्च ऋण वृद्धि, बकाया क्रेडिट कार्ड प्राप्तियां, पूंजी बाजार एक्सपोजर के लिए अर्हक ऋण और अग्रिम वैयक्तिक ऋण को बैंकों की आस्ति गुणवत्ता की दृष्टि से चिंता का विषय माना गया। अतः विशिष्ट क्षेत्रों यथा वैयक्तिक ऋण, पूँजी बाजार एकसपोजर के लिए अर्हक ऋण एवं अग्रिम, जमा न लेनेवाली प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण एनबीएफसी (एन बी एफ सी - एन डी - एस आइ) तथा वाणिज्यिक भूसंपदा ऋण, के मानक अग्रिमों पर बैंकों (आरआरबी को छोड़कर) के लिए सामान्य प्रावधानीकरण अपेक्षा 0.40 प्रतिशत से बढ़ाकर मई 2006 में 1.0 प्रतिशत तथा जनवरी 2007 में और बढ़ाकर 2.0 प्रतिशत कर दी गई।

6.26 इस प्रकार, बैंकों से अपेक्षित है कि वे मानक आस्तियों के लिए चार अलग-अलग दरों पर वैश्विक ऋण पोर्टफोलियो के आधार पर न्यूनतम सामान्य प्रावधान करें (बॉक्स : IV.1)। इसके बाद से ये प्रावधानीकरण पूंजी पर्याप्तता के प्रयोजन से अनुमत सीमा तक टियर-II पूंजी में समावेशन हेतु लागू होंगे। विद्यमान दिशा-निर्देशों के अनुसार अवमानक आस्तियों में प्रतिभूति-रक्षित एक्सपोजरों के लिए 10 प्रतिशत और गैर जमानती एक्सपोजरों के लिए 20 प्रतिशत का प्रावधानीकरण किया जाना है। संदिग्ध आस्तियों का, उनके संदिग्ध

सारणी IV.1 - मानक आस्तियों के लिए प्रावधानीकरण अपेक्षाएं

(प्रतिशत)

श्रेणी		अपेक्षा
1		2
क.	कृषि और लघु तथा मझौले उद्यम क्षेत्रों को सीधे अग्रिम	0.25
ख.	20 लाख रुपये से अधिक के रिहाइशी आवासीय ऋण	1.00
ग.	व्यक्तिगत ऋण (क्रेडिट कार्ड से मिलनेवाले ऋण सहित), वाणिज्यिक पूंजी बाजार एक्सपोजर के रूप में जाने जानेवाले ऋण और अग्रिम, वाणिज्यिक स्थावर संपदा ऋण, जमा स्वीकार न करनेवाले प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के ऋण और अग्रिम	2.00
घ.	अन्य सभी ऋण जो कि (क), (ख) और (ग) में शामिल नहीं है।	0.40

रहने की अवधि के आधार पर प्रावधानीकरण श्रेणियों में बांट कर किया जाता है। वर्तमान समय में संदिग्ध आस्तियों का प्रावधानीकरण जमानती भाग पर 20 प्रतिशत से 100 प्रतिशत के बीच जबकि गैर-जमानती भाग के लिए यह 100 प्रतिशत है ।

6.27 अप्रत्याशित ऋण हानियों के लिए उच्चतर प्रावधानीकरण कुल मिलाकर बैंकों को वित्तीय मजबूती देता है और वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता को बढ़ाता है। वित्तीय प्रणाली को और अधिक मजबूती देने के उद्देश्य से बैंकों को कहा गया कि वे वांछित प्रथा के अनुसार विवेकसम्मत न्यूनतम स्तर से ऊपर स्वेच्छा से प्रावधानीकरण तय करें। यह कार्य बैंकों द्वारा या तो गैर-निष्पादक आस्तियों के लिए उच्चतर स्तर के लिए विशिष्ट प्रावधान करके अथवा गैर-निष्पादक आस्तियों हेतु अस्थिर प्रावधानीकरण के माध्यम से पूरा किया जा सकता है। 4 फरवरी 1994 को भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी दिशानिर्देशों के अनुसार बैंकों को प्रावधानीकरण के लिए प्रचलित विवेकपूर्ण दिशा निर्देशों के अनुसार, अपेक्षित प्रावधानों के प्रति अस्थिर प्रावधान, जहां-जहां उपलब्ध था, को प्रतितुलित करने की अनुमति दी गयी थी। तथापि, ऐसा लगता है कि निर्धारित विवेकसम्मत दिशा निर्देशों के अनुसार अपेक्षित प्रावधानीकरणों के विरुद्ध प्रतितुलित करने के लिए अस्थायी प्रावधानीकरणों का प्रयोग कुछ मामलों में लाभों को सुगम बनाने के लिए किया गया था। अतः दिशा निर्देशों की समीक्षा की गई और संशोधित दिशानिर्देश 22 जून 2006 को जारी किए गए।

6.28 दिशा निर्देशों के अनुसार अस्थायी प्रावधानीकरणों का उपयोग गैर-निष्पादक आस्तियों के संबंध में प्रचलित विवेकसम्मत दिशा निर्देशों के अनुसार विशिष्ट प्रावधानीकरण के लिए अथवा मानक आस्तियों के लिए विनियामक प्रावधान करने के लिए नहीं किया जा सकता है। निदेशक मंडल के अनुमोदन तथा भारतीय रिज़र्व बैंक की पूर्व अनुमति से क्षतिग्रस्त लेखों के संबंध में केवल असाधारण परिस्थितियों में सिर्फ आकस्मिकताओं के लिए अस्थायी प्रावधानों का उपयोग किया जा सकता है। बैंकों के निदेशक मंडलों से अपेक्षित है कि वे एक निर्धारित नीति बनाएं जिसमें यह स्पष्ट उल्लेख हो कि किन परिस्थितियों को असाधारण माना जाएगा। इस संबंध में उपयुक्त नीतियाँ विकसित करने के लिए बैंकों के निदेशक मंडलों की सुविधा हेतु भारतीय रिज़र्व बैंक ने 13 मार्च 2007 को स्पष्ट किया है कि असाधारण परिस्थितियों से आशय है ऐसी हानियां जो कि कारोबार की सामान्य परिस्थितियों में नहीं होतीं और अपवादस्वरूप तथा ये बार-बार न होने वाली हैं। ये असाधारण परिस्थितियां सामान्यतया तीन श्रेणियों की होती हैं : सामान्य (नागरिक अशांति,देश में मुद्रा की विफलता, प्राकृतिक आपदाओं और महामारियों के कारण बैंकों को होने वाली अप्रत्याशित हानियां), बाजार (बाजारों में आम मंदी) और ऋण (अप्रत्याशित ऋण हानियां)। अस्थायी प्रावधानीकरण को लाभ-हानि खाते में क्रेडिट करके प्रत्यावर्तित नहीं किया जा सकता है। तथापि, ये प्रावधानीकरण सकल गैर-निष्पादक आस्तियों से विशुद्ध गैर-निष्पादक आस्तियों को घटाकर निकाले जा सकते हैं। प्रकारान्तर से इन्हें कुल जोखिम भारित आस्तियों की 1.25 प्रतिशत उच्चतम सीमा के भीतर टियर II की पूंजी के एक हिस्से के रूप में माना जा सकता है।

6.29 मौद्रिक स्थिरता वित्तीय स्थिरता में भी योगदान देती है। हाल के वर्षों में, कुछ अवसरों पर मुद्रास्फीति दर में कुछ काँटों को छोड़कर, समग्र मौद्रिक स्थिरता और रिज़र्व बैंक की मौद्रिक कार्रवाइयों ने वित्तीय स्थिरता को प्रबल किया है। हाल के वर्षों में, रिज़र्व बैंक ने कुछ क्षेत्रों में बैंकों के एक्सपोजर के बारे में जोखिम भार बढ़ा दिया है (यथा वाणिज्यिक भूसंपदा ऋण)। ऋण के प्रवाह को कम करने के साथ उक्त उपायों ने बैंकों के तुलनपत्रों के संरक्षण में भी मदद की है।

अनर्जक आस्ति समाधान

6.30 गैर-निष्पादक ऋणों का उच्च स्तर अनेक देशों में बैंकिंग संकट का प्रमुख कारण रहा है। यह प्रायः इतना प्रभावकारी हो जाता है कि इसके कारण बैंकिंग प्रणाली का पुनर्विन्यास करने की नौबत आ जाती है और इसके लिए सरकार को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ती है (बॉक्स VI.2)। भारत के परिप्रेक्ष्य में यह देखा गया है कि पुरानी देयताओं की वसूली के लिए प्राधिकरणों को अनेक प्रणालियां अपनानी पड़ी हैं जिसके कारण वर्षों से अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की वसूली बढ़ी है (सारणी IV.2)।

6.31 पुनर्विन्यास/पुनर्निर्धारण के बारे में जून 2007 में दिशानिर्देशों का प्रारूप जारी किया गया था ताकि अग्रिमों के पुनर्विन्यास के मौजूदा दिशानिर्देशों को संशोधित कंपनी ऋण

बॉक्स VI.2 : गैर-निष्पादक ऋण प्रबंधन - विभिन्न देशों के अनुभव

वैश्विक रूप से वर्ष 2003 के दौरान गैर-निष्पादक ऋणों का अनुमानित स्तर लगभग 1.3 ट्रिलियन अमरीकी डालर था जिसमें से लगभग 1 ट्रिलियन अमरीकी डालर अथवा वैश्विक गैर-निष्पादक ऋणों के लगभग 77 प्रतिशत (अर्नस्ट एण्ड यंग, 2004) की जवाबदेही एशियाई देशों की रही है। 1997 के आर्थिक संकट के दौरान बहुत से एशियाई देशों की अर्थव्यवस्था में उच्चतम गैर-निष्पादक ऋणों का प्रतिशत कुल अग्रिमों के 20 प्रतिशत से ऊपर चला गया था। 1990 के दशक के मध्य में, लैटिन अमरीका और विकसित अर्थव्यवस्थाओं में ये आंकड़े असुखद स्तरों तक पहुँचकर प्राथमिकतया कुछ प्रकार का संकट लेकर आए (सारणी-1)। बैंक पुनर्विन्यास के कारण आज इन आंकड़ों में तेजी से गिरावट आ गई है और और उन्हें नियंत्रण योग्य स्तर पर लाया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप गैर-निष्पादक ऋण प्रबंधन का एक अहम हिस्सा बनाया गया था। वर्ष 2004 तक केवल चीन, थाईलैंड, मलेशिया को छोड़कर अधिकांश देशों में गैर-निष्पादक ऋणों का स्तर कम से सामान्य तक था। भारत में मार्च 2004 के अंत में सकल गैर-निष्पादक ऋणों का स्तर, कुल अग्रिमों का 7.2 प्रतिशत था जो कि मार्च 2007 के अंत में नीचे आकर 2.4 प्रतिशत रह गया।

अनर्जक ऋणों की समस्या के निहित कारण विभिन्न देशों के बीच भिन्न-भिन्न थे। अधिकांश एशियाई देशों का उच्च स्तरीय अनर्जक ऋण 1990 के दशक की दूसरी छमाही में आये दक्षिण पूर्व एशियाई संकट के अनुरूप रहा। अनर्जक ऋणों के लिए उत्तरदायी प्रमुख घटकों में निम्नलिखित शामिल हैं : राज्य उद्यमों के कारोबार निष्पादन में गिरावट (चीन), निवेशकों के लिए प्रत्याशित सीमा के अनुसार कार्य करने में स्थावर संपदा क्षेत्र की अक्षमता (थाइलैंड और जापान), ब्याज दर नियंत्रण और चयनात्मक ऋण आबंटन (कोरिया), अधिमूल्यन विनिमय दर के कारण आई मंदी तथा स्वयं की स्वामित्ववाली कंपनियों को ऋण देनेवाले बैंक निदेशकों में वित्तीय अनुशासन का अभाव (मेक्सिको)। तुर्की में, राज्य के बैंकों में अनर्जक ऋणों की समस्या मुख्य रूप से राजनीति से प्रेरित ऋण प्रदान किए जाने के फलस्वरूप थी (स्टेनहर्र, टुकेल और असर, 2004 : रेड्डी के.पी. 2002; और देसमेट 2000)।

अनर्जक ऋणों की संकल्पना के दो पहलू हैं अर्थात ज्स्टाकट और ज्आगमोंट की समस्या। ज्स्टाकट समस्या बैंकों के चालू तुलन पत्रों - पूंजी जुटाने तथा अनर्जक ऋणों को दूर करने से संबंधित है। ज्आगमोंट की समस्या का विषय बैंकों के अर्जनों की गुणवत्ता में सुधार लाने से संबंधित है ताकि बैंकों के तुलनपत्र में भविष्य के घट-बढ़ को सीमित रखा जाए। इसमें आम तौर पर, दक्षता में सुधार लाने के लिए परिचालनगत पुनर्संरचना करनी होती है जिसके अंतर्गत बेहतर ऋण आकलन, विशेषज्ञता, बेहतर सूचना प्रणाली और लागत घटाना शामिल है। अनर्जक ऋणों की समस्या का समाधान करने के लिए विभिन्न देशों द्वारा अपनायी गयी संकट निवारण प्रक्रिया में आस्ति प्रबंधन कंपनियों (एएमसी) का उपयोग करना बहुत ही आम पद्धति थी। अन्य बातों के साथ-साथ अनर्जक ऋणों के साथ निपटने के लिए उपलब्ध कुछ अन्य विकल्प थे- पुनः पूंजीकरण, ऋण अदला-बदली (स्वैप) और ऋण विनिमय के लिए ऋण। ऋण अदला-बदली के अधीन बैंक ऋणों को बाजार मूल्यों तक घटाया जाता है तथा परस्पर स्वैप किया जाता हैं। ऋण विनिमय के ऋण के लिए पार्टियों के बीच समझौता वार्ता कर लेने के बाद ऋण संविदाओं को संशोधित करना होता है, जिसमें प्रायः ब्याज दर घटानी पड़ती है तथा ऋण संविदाओं की परिपक्वता अवधि बढ़ानी पड़ती है।

अनर्जक ऋणों के उच्च स्तरों के मामलों में बैंकिंग तंत्र की पुनर्संरचना करनी होती है जिसकी समग्र लागत में राजकोषीय लागत के अलावा उत्पादन तथा रोजगार के रूप में होनेवाली हानियां शामिल होती हैं। इस प्रकार, किसी बैंकिंग संकट की समग्र लागत को मापना मुश्किल है। दूसरी ओर, राजकोषीय लागत को विनिर्दिष्ट करना और मापना आसान है। राजकोषीय लागत को मोटे तौर पर सरकारी क्षेत्र के प्रति सकल लागत (चलनिधि समर्थन पर सरकार तथा केंद्रीय बैंक के परिव्यय; बाधित आस्तियों की खरीद; जमाराशियों का भुगतान; तथा ईक्विटी या गौणीकृत ऋण की खरीद के जरिए पुनः पूंजीकरण) और सरकारी क्षेत्र के प्रति निवल लागत (सकल परिव्यय को अधिगृहीत आस्ति और ईक्विटी पण की बिक्री एवं पुनः पूंजीकृत सस्थाओं द्वारा ऋण की चुकौती के साथ निवल बनाया जाता है) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इन लागतों का बहुत अधिक होने का अनुमान है। कई देशों के बीच हुई बैंकिंग संकटों की 40 घटनाओं के अनुमान के अनुसार, सरकारें अपनी वित्तीय प्रणाली को पुनः व्यवस्थित बनाने के लिए राष्ट्रीय सकल देशी उत्पाद का औसतन 12.8 प्रतिशत खर्च करती हैं (हनोहान और क्लिंजेबिएल, 2000 और 2001)। विकासशील देशों में यह प्रतिशत और उच्चतर (14.3 प्रतिशत) था। कुछ संकटों की स्थिति के लिए काफी बड़े परिव्यय करने पड़े थे। उदाहरण के लिए अर्जेंटिना और चीन में अस्सी के दशक के प्रारंभ में आए संकट के प्रसंग में सरकारों ने सकल देशी उत्पाद के 40-55 प्रतिशत तक का खर्च उठाया। होलस्कर और क्विंटिन (2003) के अध्ययन में 1981-2003 के दौरान आए बैंकिंग संकटों के विभिन्न प्रसंगों में समग्र देशों की तुलनात्मक राजकोषीय लागतें उपलब्ध हैं। इन लागतों में काफी बड़े अंतर पाये गए जो रूस और अमरीका में अत्यल्प राशि (शून्य के करीब) और इंडोनेशिया में 50 प्रतिशत से अधिक के दायरे में थे।

सारणी 1 : बैंकिंग प्रणाली के सकल अनर्जक ऋण

(कुल अग्रिमों का प्रतिशत)

देश	सर्वोच्च अनर्जक ऋण	सर्वोच्च अनर्जक ऋण का वर्ष	2004 का अनर्जक ऋण
चीन	42	..	12.8
कोरिया	25	1997-99	1.9
मलेशिया	25	1997-99	11.7
थाइलैंड	47	1997-99	11.9
ब्राजील	15	1995-97	3.8
मेक्सिको	13	1995-97	2.8
तुर्की	16	2001	6.0
जापान	9	2002	2.9
स्वीडन	11	1991-93	0.9
भारत	23*	1993	7.2

* : सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए

स्रोत : बीआइएस प्रलेख; आइएमएफ की वेबसाइट (देश की प्रलेख और वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट)

संदर्भ :

हनोहान पी. और क्लिंजेबिएल, डी (2000) कंट्रोलिंग फिस्कल कोस्ट ऑफ बैंकिंग क्राइसिस; *वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर* सं.2441.

हनोहान पी. और क्लिंजेबिएल, डी (2001) दि फिस्कल कॉस्ट इंप्लिकेशन आफ ऍन अकोमडेटिंग एप्रोच टु बैंकिंग क्राइसिस; जर्नल ऑफ बैंकिंग एण्ड फाइनेंस।

होलस्कर डी.एस. और क्विंटिम, एम.(2003), मैनेजिंग सिस्टमिक बैंकिंग क्राइसिस; *ऑकेजनल पेपर,* आइएमएफ

रेड्डी के.पी.(2002), ए कंपेरेटिव स्टडी ऑफ नॉन-पर्फार्मिंग एसेट्स इन इंडिया इन दि ग्लोबल कांटेस्ट सिमिलैरिटिज एण्ड डिससिमिलैरिटिज, रेमेडियल मेजर्स; www.upan.org

देसमेट के.(2000), एकाउंटिंग फॉर दि मेक्सिकन बैंकिंग क्राइसिस; *इमर्जिंग मार्केटस् रिव्यू;* खंड 1

अल्फ्रेड स्टीनहेर्र, ए.टुकेल, ए. और असर, एम (2004), दि टर्किश बैंकिंग सेक्टर चैलेंजेस एण्ड आउटलुक इन ट्रांजिशन टु ईयू मेंबरशिप; *सेंटर फॉर यूरोपिएन पॉलिसी स्टडीज; ईयू-टर्की वर्किंग पेपर सं.4/अगस्त*

अर्नेस्ट और यंग (2006) ग्लोबल नॉन परफार्मिंग लोन अर्नेस्ट और यंग रिपोर्ट 2006; www.eu.com

अर्नेस्ट और यंग (2004) ग्लोबल नॉन परफार्मिंग लोन अर्नेस्ट और यंग रिपोर्ट 2004; www.eu.com

सारणी VI.2: अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा की गई वसूली

(करोड़ रुपयों में)

वर्ष	वसूली
2000-01	16,409
2001-02	17,638
2002-03	23,183
2003-04	28,004
2004-05	26,940
2005-06	29,087
2006-07	27,176

नोट : वर्ष के दौरान वसूली संबंधी आंकड़े, जिसमें अपग्रेडेशन के कारण वसूली, वास्तविक वसूली तथा अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा समझौता/ बट्टा खाता के कारण की गयी वसूली शालि हैं।

स्रोत : परोक्ष विवरणियाँ (देशी)।

पुनर्विन्यास प्रक्रिया के तहत प्रावधानों के अनुरूप किया जा सके। अतिरिक्त विकल्प देने और अनर्जक आस्तियों के लिए स्वस्थ गौण बाजार विकसित करने की दृष्टि से जुलाई 2005 में अनर्जक आस्तियों की बिक्री/खरीद के लिए दिशानिर्देश जारी कर उसमें निम्नलिखित को शामिल किया गया बैंकों द्वारा अनर्जक वित्तीय आस्तियों की खरीद / बिक्री की प्रक्रिया, मूल्यन और कीमत निर्धारण पहलू सहित, आस्ति वर्गीकरण, प्रावधानीकरण, वसूलियों का लेखांकन, पूँजी पर्याप्तता और एक्सपोजर मानदंड तथा प्रकटन संबंधी अपेक्षाएं। बैंकों द्वारा व्यक्त कठिनाइयों के उत्तर में मामले की समीक्षा की गयी तथा मई 2007 में दिशानिर्देशों को अंशतः आशोधित किया गया। यह निर्दिष्ट किया गया कि कम-से-कम 10 प्रतिशत अनुमानित नकदी प्रवाह को पहले साल वसूल कर लिया जाए तथा उसके बाद कम-से-कम 5 प्रतिशत प्रत्येक छमाही में वसूल किया जाए। पूरी वसूली तीन साल में कर ली जाए।

जोखिम प्रबंधन प्रथाओं को सशक्त बनाना

6.32 बैंकों को आज कीमतों, विनिमय दरों और ब्याज दरों में अत्यधिक उतार-चढ़ाव के कारण अधिक जोखिम का सामना करना पड़ रहा है, जिससे स्ट्रेस परीक्षण के लिए नियमित प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता बन पड़ी है। अंतरराष्ट्रीय रूप से स्ट्रेस परीक्षण बैंकों की जोखिम प्रबंधन प्रणालियों का अभिन्न अंग बन गया है और इसे वित्तीय परिवर्तियों में किसी अप्रत्याशित घटना या घट-बढ़ के प्रति संभाव्य अतिसंवेदनशीलता का आकलन करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

6.33 बैंकों में मोटे तौर पर दो श्रेणी के स्ट्रेस परीक्षण किये जाते हैं अर्थात् संवेदनशीलता परीक्षण और परिदृश्य परीक्षण। संवदेनशीलता परीक्षण सामान्यतः किसी एक परिवर्ती में होनेवाले परिवर्तन केबैंक की वित्तीय स्थिति पर प्रभाव को आंकने (उदा. के लिए आय वक्र में उच्च कोटि का समांतर बदलाव, विदेशी मुद्रा दरों में उल्लेखनीय घट-बढ़ और ईक्विटी सूचकांक में भारी घट-बढ़) के लिए प्रयुक्त होता है (बॉक्स VI.3)। परिदृश्य परीक्षण में कई परिवर्तियों में एक ही समय में होनेवाले उतार-चढ़ाव शामिल होते हैं उदाहरण के लिए पिछले समय के एक प्रसंग के अनुभव पर आधारित ईक्विटी मूल्य, तेल मूल्य, विदेशी मूल्य दरें, ब्याज दरें और चलनिधि। भारत के बैंकों के लिए जोखिम प्रबंधन के रूप में ज्स्ट्रेस परीक्षणट अपनाये जाने की जरूरत पर वर्ष 2006-07 के वार्षिक नीति वक्तव्य में जोर दिया गया था। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने 26 जून 2007 को स्ट्रेस परीक्षण पर दिशानिर्देश जारी किये। बैंकों से अपेक्षित है कि वे विभिन्न जोखिम घटकों के लिए 30 सितंबर 2007 तक यथोचित स्ट्रेस परीक्षण नीतियां और संबंधित स्ट्रेस परीक्षण ढांचा बना लें तथा 31 मार्च 2008 से औपचारिक स्ट्रेस परीक्षण को परिचालन में लाएं।

समेकन तथा समामेलन

6.34 बढ़ती प्रतिस्पर्धा से बैंक विलयन एवं अधिग्रहण के लिए वैश्विक रूप में अभिप्रेरणा स्वीकृत हुई है। बढ़ी हुई प्रतिस्पर्धा की चुनौतियों का सामना करने के अलावा, संस्थाओं की आर्थिक स्थिति में गिरावट के कारण भी विलयन और समामेलन को बढ़ावा मिलेगा, विशेष रूप से उनमें जो वित्तीय रूप से सक्षम नहीं हैं। ऐसी संस्थाएं जो धराशायी होने के कगार पर हैं, जमाकर्ताओं के हितों को पूरी तरह प्रभावित करती हैं और कभी-कभी संक्रमण को बढ़ावा देती हैं। इस प्रकार, वित्तीय स्थिरता के दृष्टिकोण से विलयन और समामेलन को वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ बनाने के साधन के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। भारत में छोटे बैंकों के समेकन तथा विलयन के प्रति एक जागरूक दृष्टिकोण अपनाया जाता है ताकि बैंकिंग प्रणाली को सहक्रिया के लाभ प्राप्त हों और उसे सुदृढ़ता प्रदान की जाए। 2006-07 और 2007-08 की पहली छमाही के दौरान, चार बैंकों का अन्य बैंकों के साथ विलयन/समामेलन किया गया जैसा कि अध्याय-3 (खंड-2) में दिया गया है।

पर्यवेक्षी उपाय

6.35 वित्तीय स्थिरता की दृष्टि से वित्तीय विनियामकों और पर्यवेक्षकों के लिए संकट से बचाव एक प्रमुख उद्देश्य होता है। इसके अधीन वित्तीय प्रणाली की स्थिति को खतरा पहुंचाने वाले संभाव्य जोखिमों और अस्थिरताओं पर निगरानी रखना शामिल है। संकट की स्थिति आने से बचाव करने की सफलता सूचना एकत्र करने, तकनीकी विश्लेषण, निगरानी तथा मूल्यांकन की प्रक्रिया पर निर्भर करता है। विश्लेषणात्मक प्रक्रिया में समष्टि आर्थिक कार्यनिष्पादन

बॉक्स VI.3 : ब्याज दर जोखिम की माप

ब्याज दर जोखिम किसी वित्तीय संस्था के वित्तीय कार्यों पर विशेष रूप से अर्जनों या निवल ब्याज आय (एनआइआइ) और ईक्विटी पर बाजार ब्याज दरों में होनेवाले परिवर्तनों के प्रतिकूल प्रभाव का जोखिम होता है। ब्याज दर जोखिम की पहचान करना, मात्रा निश्चित करना और उसे मापना काफी महत्वपूर्ण हो गया है विशेष रूप से विनियमनमुक्त वातावरण में तथा बासेल II पूंजी समझौते के स्तम्भ II की अपेक्षाओं के लागू होने की स्थिति में।

ब्याज दर जोखिमों को मापने की विभिन्न तकनीक हैं; जैसे पारंपारिक परिपक्वता अंतर विश्लेषण, अवधि और अनुकरण। किसी बैंक के ब्याज दर जोखिम एक्सपोजर मापने के दो अलग-अलग परंतु अनुपूरक दृष्टिकोण हैं यथा, अर्जन परिप्रेक्ष्य दृष्टिकोण और आर्थिक मूल्य दृष्टिकोण। अर्जन परिप्रेक्ष्य दृष्टिकोण में निवल ब्याज आय (एनआइआइ) पर ब्याज दरों में होनेवाले परिवर्तन का प्रभाव निश्चित करना शामिल है। यह दृष्टिकोण जिसे जोखिम के साथ अर्जन करने के रूप में भी जाना जाता है, अल्पावधि संभावनाओं से पड़नेवाले प्रभाव का विश्लेषण करता है। आर्थिक मूल्य परिप्रेक्ष्य में बाजार दरों का पता लगाने के लिए भुनाए गए प्रत्याशित निवल नकदी प्रवाहों के वर्तमान मूल्य का निर्धारण शामिल है। इसमें ब्याज दरों में होनेवाली घट-बढ़ के प्रति बैंक की निवल संपत्ति की संवेदनशीलता पर ध्यान केंद्रित होता है और इसके द्वारा दीर्घावधि परिप्रेक्ष्य में उत्पन्न होनेवाले जोखिम की पहचान की जाती है।

परिपक्वता अंतर विश्लेषण में सम्मिलित हैं - ब्याज दर संवेदनशील आस्तियों (आरएसए), देयताओं (आरएसएल) और तुलनपत्रेतर स्थितियों का वितरण, उनकी परिपक्वता (निर्धारित दर) के अनुसार पूर्व-परिभाषित समयावधि अथवा उनके अगले पुनर्मूल्य (सचल दर), जो भी पहले हो, की एक निश्चित संख्या में करना । बिना निश्चित पुनर्मूल्यन समयांतर वाली आस्तियों और देयताओं (बचत बैंक, नकदी ऋण और ओवरड्राफ्ट) या संविदागत परिपक्वता से इतर वास्तविक परिपक्वताओं वाली आस्तियों और देयताओं (पुट/कॉल आप्शन के साथ बांडों में सन्निविष्ट आप्शन, ऋण, नकदी ऋण/ओवरड्राफ्ट तथा मीयादी जमाराशियों) के लिए न्याय निर्णय, अनुभवजन्य अध्ययन और बैंकों के पिछले अनुभव के अनुसार समयावधि निश्चित की जाती है। अर्जनों पर पड़नेवाले प्रभाव का मूल्यांकन करने की दृष्टि से उस समयावधि के लिए पुनर्मूल्यन अंतर निकालने के लिए प्रत्येक समयावधि के आरएसए से आरएसएल को घटा दिया (निवल बना दिया) जाता है। एक सकारात्मक धनात्मक अंतर दर्शाता है कि बैंक के पास ब्याज दर संवेदी देयताओं (आरएसएल) की तुलना में अधिक ब्याज दर संवेदी आस्तियां (आरएसए) हैं। एक धनात्मक या आस्ति संवेदनशील अंतर का अर्थ है कि यदि ब्याज दर बढ़ती है तो बैंक की निवल ब्याज आय (एनआइआइ) बढ़ेगी और यदि घटती है तो वह घटेगी। इस अंतर को ब्याज दर संवेदनशीलता के एक उपाय के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। जोखिम पर किए जानेवाले अर्जनों (ईएआर) का हिसाब लगाने के लिए धनात्मक या ऋणात्मक अंतर को अनुमानित ब्याज दर परिवर्तनों द्वारा गुणित किया जाता है।

अवधि या मेकॉले की अवधि की गणना नकदी आगम प्राप्त किए जाने तक लगनेवाले समय के भारित औसत के रूप में की जाती है। भार, प्रतिभूति के वर्तमान मूल्य के खंडित अंश के रूप में प्रत्येक नकदी प्रवाह के बराबर होता है और समय का संबंध भुगतान या प्राप्ति होने तक भविष्य में लगनेवाले समय की मात्रा से है। इसे समय की इकाईयों में मापा जाता है। मेकॉले की अवधि में आनेवाला जरा-सा अंतर संशोधित अवधि होती है जिसे आय (यील्ड) में एक 100 आधार अंक परिवर्तन के लिए मूल्य में होनेवाले अनुमानित प्रतिशत परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया जाता है। संशोधित अवधि मेकॉले की अवधि को (1+ वाइ टी एम) से भाग करने के बराबर होती है। इसकी यह बताने की उपयोगी विशेषता है कि ब्याज दरों किसी परिवर्तन के कारण किसी प्रतिभूति के मूल्य में प्रतिशत के रूप में कितना परिवर्तन होगा।

प्रतिरक्षण के संदर्भ में, अवधि विश्लेषण से कोई बैंक ब्याज पर जोखिम के प्रभाव को अधिमानित धारण अवधि के साथ आस्तियों और देयताओं की अवधि के अनुरूप बनाते हुए कम करने में सक्षम हो जाएगा। अवधि अंतर मॉडल में निवल ब्याज आय या शेयरधारकों की इक्विटी के बाजार मूल्य को किसी बैंक के तुलन पत्र में शामिल प्रत्येक प्रतिभूति के लिए सभी नकदी आगमों की समयावधि का निर्धारण करते हुए व्यवस्थित करने पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। स्थिर अंतर विश्लेषण के विपरीत, जिसमें कि दर संवेदनशीलता या पुनर्मूल्यन की बारंबरता पर ध्यान केंद्रित होता है, अवधि अंतर विश्लेषण में मूल्य संवेदनशीलता पर ध्यान केंद्रित होता है। किसी बैंक का ब्याज दर जोखिम आस्तियों की भारित औसत अवधि की देयताओं की भारित औसत अवधि के साथ तुलना करते हुए बताया जाता है। अंतर विश्लेषण से अवधि अंतर के संकेत तथा मात्रा से इस बात की जानकारी मिलती है कि कोई बैंक संभाव्य रूप से लाभ प्राप्त करेगा या हानि उठाएगा और ब्याज दर के दांव लगाने की मात्रा कितनी होगी। ब्याज दर जोखिम मापन प्रणाली का सरल परिपक्वता/पुनर्मूल्यन कार्यक्रमों के आधार पर किए जानेवाले मापन की अपेक्षा अनुकरण अत्यधिक आधुनिक साधन है। अनुकरण तकनीकों में विशिष्ट रूप से अर्जनों और आर्थिक मूल्यों पर ब्याज दरों में परिवर्तनों के संभाव्य प्रभावों का विस्तृत आकलन होता है जो ब्याज दरों की भावी दिशा, आय वक्र की स्थिति, कारोबारी गतिविधि में परिवर्तन मूल्यन और प्रतिरक्षा (हेजिंग) नीतियों की तथा नकदी आगमों पर उनके प्रभाव की अनुकृति द्वारा किया जाता है।

भारत के संदर्भ में, वर्ष 1993 से प्रारंभ करते हुए ब्याज दरों पर प्रशासनिक प्रतिबंध निरंतर रूप से शिथिल कर दिए गए हैं और फिलहाल कुछेक को छोड़कर सभी ब्याज दरों को अविनियमित कर दिया गया है। इससे बैंकों को ब्याज दर परिवर्तनों का सामना करना पड़ रहा है और परिणामतः ब्याज दर जोखिम बैंकों के लिए अतिसंवेदनशीलता का महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है। इसके अलावा, ब्याज दरों के अविनियमन, निवेश संविभाग के वर्गीकरण और मूल्यन संबंधी मानदंडों को अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बना दिया गया है। बैंकों से अपेक्षित है कि वे अपने निवेश संविभाग को तीन श्रेणियों अर्थात् ज्व्यापार के लिए धारितट (एएफटी), ज्बिक्री के लिए उपलब्धट (एएफएस) और ज्परिपक्वता तक धारितट (एचटीएम) में वर्गीकृत करें। एचएफटी और एएफएस के अधीन वर्गीकृत निवेशों से ट्रेडिंग बही बनती है और इन्हें नियमित अंतरालों पर बाजार मूल्यों पर बही में अंकित करना होता है तथा उनके मूल्यह्रास का प्रावधान किया जाता है। वर्ष 2005 के पहले, विशेष रूप से वर्ष 1997 तथा 2005 के बीच में, भारतीय बैंकों के पास विभिन्न कारणों से यथा ऋण की कुल खरीद का अभाव, विद्यमान उच्चतर अनर्जक आस्तियां और ऋणों के लिए पूंजी पर्याप्तता आवश्यकता के कारण सांविधिक अपेक्षाओं से काफी ऊंचे स्तर पर सरकारी प्रतिभूतियां धारित थीं। हालांकि, अधिक मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियां धारित करने के इस दृष्टिकोण के कारण भारतीय बैंक ऋण जोखिम से बच गए, फिर भी, इसके कारण उन्हें उच्च ब्याज दर जोखिम का सामना करना पड़ा। प्रसंगवश, वित्तीय वर्ष 2002-03 और 2003-04 के दौरान चूंकि ब्याज दरें घट गई थीं, अतः, बैंकिंग उद्योग को भारी प्राप्ति हुईं। तथापि, बाद में आय में हुई निरंतर वृद्धि के फलस्वरूप बैंकों से कहा गया कि वे अपने निवेश संविभाग पर भारी मूल्यह्रास दर्ज करें। विनियामक सहायता उपलब्ध करानी पड़ी जिससे बैंकों को, एकबारगी उपाय के रूप में, अपने निम्नतम आधार को संरक्षण देने के लिए प्रतिभूतियों को ट्रेडिंग बही से बैंकिंग बही में अंतरित करने की अनुमति मिली। इस प्रक्रिया में, बैंकिंग बही (एचटीएम) में बैंकों की प्रतिभूति धारिता बहुत अधिक बढ़ गई और ये ब्याज दर जोखिम से कारगर रूप से सुरक्षित थे।

रिज़र्व बैंक बैंकिंग प्रणाली की ब्याज दर संवेदनशीलता का निर्धारण करने के लिए आवधिक रूप से विश्लेषण करता रहा है। जोखिम पर अर्जन (ईएआर) विश्लेषण के अलावा, बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बैंकिंग समिति द्वारा ज्ब्याज दर जोखिम के प्रबंधन और पर्यवेक्षण के सिद्धांतट (सितंबर 2003) में सुझायी गयी पद्धतियों के आधार पर बैंकों के निवेश संविभाग का आवधिक विश्लेषण किया जाता है। आवधिक संवदेनशीलता विश्लेषण ब्याज दर में 100, 125 और 150 आधार अंकों की वृद्धि के लिए बैंकों के निवेश संविभाग पर संभाव्य प्रभाव को और बैंकों के लिए अपने आर्थिक मूल्य में ह्रास को अवशोषित करने के लिए उपलब्ध कुशन की सीमा का अंदाज लगाया जाता है। विनियामक पर्यवेक्षी प्रक्रिया के एक भाग के रूप में पता लगाए गए बाह्य कारकों के साथ पर्यवेक्षी कारवाई की पहल की जाती है।

एवं वित्तीय प्रणाली के विभिन्न पहलुओं के बारे में पर्यवेक्षी, विनियामक और निगरानी व्यवस्था के जरिए, जानकारी एकत्र करना निहित होता है। अलग-अलग संस्थाओं संबंधी जानकारी पर आधारित पर्यवेक्षी प्रक्रिया को लाभ प्रदान करने की दृष्टि से कारोबारी एवं ऋण चक्रों में अर्थव्यवस्था की स्थिति संबंधी जानकारी से भली प्रकार सहायता प्रदान की जा सकती है, क्योंकि समष्टि अर्थव्यवस्था एवं बाज़ार कार्य निष्पादन से ऐसी पृष्ठभूमि उपलब्ध हो जाती है जिसके आधार पर अलग अलग संस्थाओं के परिचालनात्मक कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। इस प्रकार, वित्तीय स्थिरता के लिए उचित स्थितियां बनाए रखने में पर्यवेक्षी ढांचा एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है और वह सुरक्षा के पर्याप्त उपाय प्रस्तुत करता है ताकि वित्तीय प्रणाली पर पड़नेवाले आघातों को कम रखा जाए[3] रिज़र्व बैंक ने एक सुदृढ़ पर्यवेक्षी ढाँचा भी तैयार किया है जिसमें प्रत्यक्ष और परोक्ष पर्यवेक्षण शामिल है। 2006-07 के दौरान पर्यवेक्षी मानदंडों का मुख्य ध्यान वित्तीय समूहों की निगरानी प्रक्रिया को सुदृढ़ बनाने पर था।

6.36 भारत में वित्तीय समूहों के उदय होने से नई-नई चुनौतियां सामने आई हैं। वित्तीय समूहों के विनियमन में सबसे बड़ा मुद्दा एक या दो क्षेत्र आधारित विनियामक व्यवस्थाओं के प्रति उनका एक्सपोजर है। इससे समग्र पर्यवेक्षी प्रक्रिया में अंतराल अथवा अतिव्यापन की स्थिति हो जाती है। इससे प्रायः इन संस्थाओं को प्रभावी तरीके से पर्यवेक्षित करने और विनियमित करने के लिए अपेक्षित सभी संबंधित जानकारियों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों के विनियामकों के बीच एक समन्वित दृष्टिकोण अपेक्षित है। इसलिए वित्तीय समूहों के प्रभावी पर्यवेक्षण के लिए वित्तीय समूहों के निगरानी ढाँचे को सशक्त बनाने हेतु निगरानी विनियामकों के साथ परामर्श करके कई कार्य किए गए हैं। वित्तीय समूहों पर बनाए गए कार्य दल (अध्यक्ष : श्रीमती श्यामला गोपीनाथ) द्वारा सुझाई गई परिभाषा के अनुसार 23 वित्तीय समूहों की पहचान की गई है। तथापि, पहचाने गए अनेक वित्तीय समूहों के अधीन न केवल बहुत कम निकाय थे, बल्कि एक बाजार क्षेत्र से परे उनका परिचालन भी सीमित था। इनमें से कुछ समूहों के आंतर-समूह लेन-देन भी बहुत कम थे। इसलिए यह महसूस किया गया कि ऐसे समूहों को केंद्रित वित्तीय समूह निगरानी के अधीन रखना प्रभावी नहीं होगा। तदनुसार, सर्वांगीण दृष्टि से महत्वपूर्ण और इस कारण जिनके लिए दक्ष पर्यवेक्षी प्रणाली जरूरी है ऐसे प्रमुख वित्तीय समूहों पर अधिक ध्यान देने की दृष्टि से वित्तीय समूहों की पहचान करने संबंधी मानदंडों पर पुनर्विचार किया गया। संशोधित मानदंड के अनुसार वित्तीय समूह को ऐसी कंपनियों के समूह के रूप में परिभाषित किया गया है, जो कम से कम दो वित्तीय बाज़ार खंडों में उल्लेखनीय रूप से भाग लेती हैं। बैंकिंग, बीमा, म्युच्युअल फंड, और एनबीएफसी (जमाराशि स्वीकार करनेवाली तथा जमाराशि स्वीकार न करनेवाली) को वित्तीय बाजार घटक के रूप में माना जाता है।

6.37 पर्यवेक्षण के विषयों पर सही ढंग से ध्यान केंद्रित करने की दृष्टि से वित्तीय समूहों की तिमाही विवरणियों के फार्मेट में संशोधन कर उसमें सकल/निवल एनपीए संबंधी जानकारी और बाधित आस्तियों, अशोध्य ऋणों, किसी समूह संस्था में धोखाधड़ी, समूह द्वारा किए गए 'होल्डिंग आउट' परिचालन, अन्य आस्तियों और लेखांकन नीतियों में परिवर्तन शामिल किए गए हैं। जहां वित्तीय समूहों के निगरानी ढांचे में निर्दिष्ट वित्तीय बिचौलियों अर्थात रिज़र्व बैंक, सेबी, इर्डा या एमएचबी द्वारा विनियमित संस्थाओं को ध्यान में रखा जाता है वहीं विवरणियों का फार्मेट उचित रूप से संशोधित कर उसके अंतर्गत समूह की विनियमित और अविनियमित संस्थाओं में होनेवाले अंतर-समूह लेनदेन और एक्सपोजर लाए गए हैं ताकि समग्र रूप से उभरनेवाले सर्वांगीण जोखिम को बेहतर ढंग से समझा जा सके।

6.38 वित्तीय प्रणाली पर धोखाधड़ी की गतिविधियों के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक द्वारा विनियमित संस्थाओं अर्थात् वाणिज्य बैंकों, शहरी सहकारी बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों में पता लगाए गए धोखाधड़ी के मामलों पर केंद्रीकृत रूप में निगरानी रखने के लिए जून 2004 में एक धोखाधड़ी निगरानी कक्ष (एफआरएमसी) गठित किया गया। रिज़र्व बैंक ने मई 2006 में बैंकों में आवास ऋणों के क्षेत्र में होनेवाले धोखाधड़ी के प्रसंगों को घटाने की दृष्टि से अपनाए जा सकनेवाले कुछ सर्वोत्तम संव्यवहार परिचालित किए। नवंबर 2006 में रिज़र्व बैंक ने बैंकों को ई-मेल/फैक्स संदेशों के जरिए प्राप्त होनेवाले अनुरोधों के आधार पर अनिवासियों के खाते से निधियां प्रेषित करते समय सतर्कता बरतने के बारे में सचेत किया। उनसे कहा गया कि वे धनप्रेषण करने से पहले संदेशों की प्रामाणिकता को अच्छी तरह से सत्यापित कर लें विघटनकारी कार्यकलापों के लिए मुद्रा के देश से बाहर की आवाजाही को रोकने के लिए भी पहल किये गये थे (बॉक्स VI.4)।

6.39 भारत में वित्तीय स्थिरता की स्थिति का आकलन करने के लिए भारत सरकार ने सितंबर 2006 में वित्तीय क्षेत्र आकलन समिति (सीएफएसए) (अध्यक्ष डॉ. राकेश मोहन, सह -अध्यक्ष:डॉ. डी. सुब्बाराव) गठित की थी। उक्त आकलन की मुख्य अवधारणा परस्पर एक दूसरे को बल प्रदान करने वाले तीन स्तंभों पर आधारित है यथा - (i) वित्तीय स्थिरता आकलन और स्ट्रेस परीक्षण; (ii) कानून, आधारभूत व्यवस्था (इंफ्रास्ट्रक्चर) और बाजार विकास के मामले;

[3] स्चिंनासी, जी.जे. (2006) सेफगार्डिंग फाइनेंशिएल स्टैबिलिटी - थ्योरी एंड प्रैक्टिस; आइएमएफ।

बॉक्स VI.4: धन शोधन, आतंकवाद वित्तीयन और अन्य बाज़ार दुरुपयोगों का सामना करना

वित्तीय लेनदेनों में, ग्राहकों की ईमानदारी एवं निधियों की शुद्धता के संबंध में रिज़र्व बैंक की विनियामक चिंताएं हमेशा बनी रहती हैं। स्थाई खाता संख्या (पैन), ग्राहक के फोटो के प्रस्तुतीकरण, धन प्रेषण के मामले में, तय सीमा के बाहर नकद लेनदेनों की अनुमति नहीं देने, उद्योग में उचित ञ्अपने ग्राहक को जानिएट (केवाईसी) संस्कृति को बढ़ाने के उद्देश्य से समय-समय पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद द्वारा जारी नकारात्मक सूची से लेन-देनों को मिलाने के संबंध में बैंकों को विभिन्न दिशा-निर्देश जारी किए गए हैं। बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासेल समिति द्वारा ग्राहक पर समुचित ध्यान दिए जाने पर जारी कागज़ातों एवं धन-शोधन निवारण (एएमएल) मानकों एवं आंतकवाद के वित्तीयन से लड़ने हेतु वित्तीय कार्रवाई कार्य दल (एफएटीएफ) द्वारा की गई संस्तुतियों के संदर्भ में नवंबर 2004 में केवाईसी दिशा-निर्देशों को पुनःदोहराया गया। बैंकों ने अपने निदेशक मंडल की अनुमति से संशोधित केवाईसी/एएमएल/सीएफटी दिशा-निर्देशों के पूर्ण अनुपालन की सूचना दी है तथा प्रक्रिया संबंधी दिशा-निर्देशों के निर्विघ्न कार्यान्वयन के लिए इसे नीचे के अधिकारियों/कर्मचारियों तक पहुंचा दिया है। नवंबर 2004 के बाद अपराधियों द्वारा इरादतन या गैर-इरादतन रूप में धन-शोधन या आतंकवाद वित्तीय कार्यकलापों से बैंक को बचाने के लिए ज़ोर दिया गया। यह बैंक को अपने ग्राहकों और उनके वित्तीय लेन-देनों को बेहतर रूप से जानने/समझने में मदद करेगा, जो उनके जोखिम को सावधानी पूर्वक प्रबंधित करने में मदद करेगा। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य यह सुनिश्चित करना रहा है कि अपराधी या आतंकवादियों द्वारा गलत प्रयोग के लिए गुमनाम या फर्ज़ी/बेनामी नामों का कोई भी खाता न खुले और बैंकों को असंगत लागत एवं ग्राहकों पर बोझ पड़ने से बचाने के लिए नीति बनाते वक्त पर्याप्त सावधनी बरती गई है।

धन-शोधन निवारण अधिनियम (पीएमएलए) 2002 के अधिनियमन के द्वारा भारत सरकार ने वैधानिक ढ़ांचा तैयार किया है। पीएमएलए 2002 की अधिसूचना पर, बैंकों को उपलब्ध नकद एवं संदिग्ध लेनदेनों की रिपोर्ट वित्तीय आसूचना इकाई-भारत (एफआईयू-आइएनडी) को उपलब्ध कराने के लिए रिपोर्टिंग ढांचा निर्धारित किया गया है। पीएलएलए के अधीन एमआईयू-आइएनडी को अपनी रिपोर्ट भेजने के पश्चात अदालती कार्यवाहियों से छुटकारा मिल जाने के वक्त रिज़र्व बैंक ने बैंकों को सावधान किया है कि एमआईयू-आइएमडी को रिपोर्ट किए गए संदिग्ध लेन-देनों से संबंधित मामले को ग्राहकों को न बताएं।

9/11 की घटनाओं को ध्यान में रखते हुए आतंकवादी कार्यकलापों के वित्तीयन के उद्देश्य से वित्तीय प्रणाली के दुरुपयोग से बचाने के लिए एफएटीएफ ने 9 विशेष संस्तुतियां (एसआर) की हैं।एस आर-VII वायर लेन-देनों से संबंधित है और ऐसे लेन-देन करते वक्त बैंकों/वित्तीय संस्थाओं द्वारा सुनिश्चित किए जाने वाले एहतियाती कदमों से संबंधित हैं। बैंकिंग चैनल के माध्यम से आतंकवाद को वित्तीयन से रोकने के लिए रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित करने के लिए बैंकों को कहा है कि सभी वायर अंतरण लेन-देनों में लेन-देन करने वाले की पूरी सूचना जैसे नाम, खाता संख्या और अंतरण करने वाले ग्राहक का पता उपलब्ध होना चाहिए; आवश्यकता होने पर उचित जांच एजेंसियों को ऐसी सूचनाएं तुरंत प्राप्त हों। ये अनुदेश घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय दोनों वायर अंतरण लेन-देनों पर लागू हैं। बैंकों को सलाह दी गई है कि यदि संपर्क किया जाने वाला बैंक अनुदेशों के बावजूद प्रेषक के बारे में सूचना देने में असमर्थ रहता है तो उसके साथ व्यवसायी संपर्क पर रोक लगाने या बंद करने पर विचार किया जा सकता है।

(iii) अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय मानकों और संहिताओं के कार्यान्वयन संबंधी स्थिति एवं प्रगति का आकलन। आकलन प्रक्रिया को सहायता प्रदान करने के लिए सीएफएसए ने (i) वित्तीय स्थिरता और स्ट्रेस परीक्षण; (ii) वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण; (iii) संस्था और बाज़ार संरचना; और (iv) पारदर्शिता मानदंडों के आकलन के लिए चार परामर्शी पैनल गठित किए हैं। ये परामर्शी पैनल उपर्युक्त प्रत्येक पहलू पर अलग-अलग रिपोर्ट तैयार करेंगे। पैनल को तकनीकी जानकारीयुक्त साहित्य एवं आधारभूत सामग्री उपलब्ध कराने के लिए सीएफएसए ने तकनीकी दल बनाए जिनमें मुख्यत: विनियामक एजेंसियों और सरकार के ऐसे अधिकारी हैं जिन्होंने उपर्युक्त संबंधित क्षेत्रों के तकनीकी पक्ष से जुड़े कार्यों में प्रगति की है। सीएफएस परामर्शी पैनल रिपोर्टों के साथ अपनी रिपोर्ट भी प्रकाशित करेगा। सीएफएसए द्वारा उक्त आकलन मार्च 2008 तक पूरा किए जाने की आशा है।

अन्य वित्तीय संस्थाएं

6.40 अर्थव्यवस्था की विकास प्रक्रिया में अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के अलावा अन्य वित्तीय संस्थाओं जैसे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक, वित्तीय संस्थाओं (एफआई) और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। समग्र वित्तीय स्थिरता की दृष्टि से इन संस्थाओं का सुगमतापूर्वक कार्य करना भी महत्वपूर्ण है। इन संस्थाओं, विषेश रूप से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सहकारी संस्थाओं की व्यापक पहुंच को देखते हुए तथा वित्तीय समावेशन को और अधिक बढ़ावा देने में इन संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनज़र रिज़र्व बैंक ने इन संस्थाओं की परिचालनगत दक्षता एवं वित्तीय सुदृढ़ता को बेहतर करने केलिए कई प्रयास किए हैं।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और ग्रामीण सहकारी बैंक

6.41 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने ग्रामीण ऋण उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का सुनियोजित फ़ाइनेंशियल नेटवर्क वित्तीय स्थिरता की परिस्थितियों को बल प्रदान कर सकता है, साथ ही यह सतत् आर्थिक वृद्धि के लिए अपेक्षित संसाधन जुटाने हेतु एक महत्त्वपूर्ण व्यवस्था प्रदान कर सकता है। तथापि, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा जिससे इन संस्थाओं के पूर्ण क्षमतागत लाभ का दोहन नहीं हो पाया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का कार्य क्षेत्र बहुत सीमित था और केवल एक लक्ष्य-समूह के प्रति एक्सपोज़र होने के कारण, रिस्क अधिक रहा। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास खजाना प्रबंधन के क्षेत्र में इतना कौशल नहीं था जो लाभ दिला सके, एक्सपोज़र की कमी और नये

प्रोडक्ट बनाने लायक स्किल न होने के कारण उधार का पोर्टफोलियो भी सीमित रहा। कार्य करने में स्वायत्तता की कमी के कारण क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का निष्पादन प्रभावित हुआ क्योंकि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अधिकांश निर्णयों के लिए प्रायोजक बैंक, सरकार, नाबार्ड और रिज़र्व बैंक की ओर ताकना पड़ता था। इस प्रकार, कई क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की वित्तीय लाभप्रदता इन समस्याओं के कारण घटी और इसके कारण वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया और वित्तीय स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

6.42 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को मजबूत बनाने की दृष्टि से सरकार ने सितंबर 2005 में प्रायोजक बैंक-वार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के राज्य स्तर पर समामेलन की कार्रवाई प्रारंभ की। यह प्रक्रिया 2006-07 के दौरान और आगे बढ़ाई गई जब 37 और बैंकों का समामेलन किया गया। कुल मिलाकर, अब तक (सितंबर 2005 से सितंबर 2007) 17 राज्यों में 19 बैंकों द्वारा प्रायोजित 147 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के समामेलन से 46 नये क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक बना लिए गये हैं। परिणामस्वरूप, 30 सितंबर 2007 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुल संख्या 196 से घटकर 95 रह गई। आरआरबी के संरचनागत समेकन के फलस्वरूप नए आरआरबी बनाए गए जो कारोबारी मात्रा तथा फैलाव की दृष्टि से वित्तीय रूप से सुदृढ़ एवं आकार में बड़े हैं। इससे वे बड़े पैमाने की किफायतों का लाभ उठा सकते हैं और अपने परिचालनगत खर्च में कटौती कर सकते हैं।

6.43 वर्ष 2007-08 के केंद्रीय बजट में ऋणात्मक निवल मालियत (निगेटिव नेट वर्थ) वाले आरआरबी को चरणबद्ध रूप से पुनःपूंजीकृत (रिकैपिटलाइज़)किये जाने की घोषणा के बाद चुनिंदा प्रायोजक बैंकों और राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के परामर्श से रिकैपिटलाइज़ेशन की पद्धति तैयार की जा रही है।

6.44 आरआरबी के कार्यनिष्पादन को सुधारने तथा उनके बोर्डों को निर्णय करने के संबंध में अधिक शक्ति तथा लचीलापन प्रदान करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने सितंबर 2006 में परिचालनगत दक्षता हेतु आरआरबी बोर्ड सशक्तिकरण कार्यदल (द टास्क फ़ोर्स ऑन एम्पावरिंग आरआरबी बोर्ड्स फॉर ऑपरेशनल इफ़िशिएंसि)(अध्यक्षः डॉ. के.जी. करमरकर) गठित किया था। उक्त कार्य दल को ऐसे क्षेत्रों के बारे में बताने को कहा गया था जहां बोर्डों को अधिक स्वायत्तता प्रदान की जा सके, विशेष रूप से निवेश, कारोबार विकास और स्टाफ व्यवस्था अर्थात स्टाफ संख्या के निर्धारण, नई भर्तियों और पदोन्नति के संबंध में । उक्त कार्य दल ने 31 जनवरी 2007 को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में अन्य बातों के साथ-साथ यह सिफ़ारिश की है कि (i) समामेलन के बाद निर्मित बड़े आकारवाले आरआरबी के मामले में आरआरबी के निदेशक बोर्ड के निदेशकों की संख्या चयनात्मक आधार पर बढ़ाकर 15 कर दी जाए; (ii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के अध्यक्ष का चयन अर्हता प्राप्त अधिकारियों के पैनल में से गुणवत्ता के आधार पर किया जाए (iii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को भी वित्तीय आस्ति प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन एवं प्रतिभूति ब्याज प्रवर्तन (एसएआरएफ़एईएसआइ) अधिनियम, 2002 के अंतर्गत लाया जाए। कार्यदल की कुछ सिफारिशों को कार्यान्वित किया गया है और अन्य जाँचा परखा जा रहा है। 'क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकट को वित्तीय आस्ति प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन एवं प्रतिभूति ब्याज प्रवर्तन (एसएआरएफ़एईएसआइ)अधिनियम, 2002 की दृष्टि से 'बैंक' कहे जाने संबंधी अधिसूचना भारत सरकार ने 17 मई 2007 को पहले ही जारी कर दी है।

शहरी सहकारी बैंक

6.45 भौगोलिक विस्तार, कार्य क्षेत्र, आकार की दृष्टि से और अपने-अपने निष्पादन के हिसाब से भी शहरी सहकारी बैंकों में विषमताएं हैं। तथापि, इस क्षेत्र में कुछ दुर्बलताएं कुछ इकाइयों की दुर्बलताओं के रूप में प्रकट हुईं जिससे जनता का विश्वास कम हुआ है और नियामकों तथा व्यापक तौर पर इस सेक्टर को चिंता हुई है। शहरी सहकारी बैंकों की एक बड़ी समस्या उनके लिए दुहरी विनियामक व्यवस्था का होना है जिसके अंतर्गत शहरी सहकारी बैंकों का नियंत्रण और पर्यवेक्षण राज्य सरकारों द्वारा, सहकारी समितियों के पंजीयक के माध्यम से तथा रिज़र्व बैंक, दोनों के द्वारा किया जाता है। इसके अलावा, एक से अधिक राज्यों में मौजूदगी वाले बैंकों के मामले में, केंद्र सरकार की ओर से सहकारी समितियों का केंद्रीय पंजीयक इन शक्तियों का प्रयोग करता है। कॉरपोरेट गवर्नेंस, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व की कमी शहरी सहकारी बैंकों को प्रभावित करने वाले दूसरे कारण थे। कई शहरी सहकारी बैंकों के आदर्श आकार के न होने से भी उनकी कार्यक्षमता और लाभप्रदता प्रभावित हुई। जैसा कि इस रिपोर्ट के अध्याय IV में वर्णित किया गया है, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की तुलना में शहरी सहकारी बैंकों का अनर्जक आस्तियों का अनुपात काफी अधिक था।

6.46 प्रणाली की जोखिम को कम करने की आवश्यकता को भाँपते हुए रिज़र्व बैंक ने एक नियामक और पर्यवेक्षी ढाँचा (रेग्यूलेटरी एंड सुपरवाइज़री फ्रेमवर्क) प्रदान करने का प्रयास किया जिससे इस क्षेत्र की समस्याओं और दुहरे नियंत्रण की कमियों को समुचित रूप से दूर किया जा सके। एक ऐसा सुपरवाइज़री सिस्टम भी स्थापित करने की आवश्यकता महसूस की गई जो शहरी सहकारी बैंकों के विषम स्वरूप के गहन विश्लेषण पर आधारित होगी तथा इस क्षेत्र को मजबूत करने की नीति के अनुरूप होगी। इस दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने शहरी सहकारी बैंकों के लिए एक ड्राफ्ट विजन डॉक्यूमेंट तैयार किया जिसे मार्च 2005 को पब्लिक डोमेन में डाला गया और बाद में अंतिम रूप दिया गया। विजन दस्तावेज के प्रस्ताव के अनुसार उन राज्य सरकारों से समझौता ज्ञापन (एमओयू)पर हस्ताक्षर करने

के लिए कहा गया जिनके यहाँ काफी बड़ी संख्या में शहरी सहकारी बैंक हैं। ज्ञापन प्रत्येक राज्य में शहरी सहकारी बैंकों के लिए कार्य दल (टैफकब) के गठन का आधार प्रदान करता है जो विचार-विमर्श-आधारित (कंसल्टेटिव)निर्णय प्रक्रिया में एक मंच का कार्य करे। रिज़र्व बैंक और राज्य सरकार के प्रतिनिधियों के अलावा, टैफकब में शहरी सहकारी बैंक सेक्टर के प्रतिनिधि शामिल हैं। टैफकब संबंधित राज्य में कमजोर परंतु चलने लायक (गैर अनुसूचित) शहरी सहकारी बैंकों की पहचान करता है और उनके पुनरुज्जीवन के लिए समयबद्ध कार्यक्रम बनाता है। यह लगाए जाने वाले फंड्स के स्वरूप और उसकी सीमा एवं प्रबंधन में परिवर्तन की आवश्यकताओं को चिह्नित करता है और उन आवधिक लक्ष्यों के बारे में बताता है जिन्हें प्राप्त किया जाना है। इसके अतिरिक्त, टैफकब द्वारा अर्थक्षम नहीं पाए जाने वाले शहरी सहकारी बैंकों को बैंकिंग कारोबार से बाहर जाना पड़ सकता है। ऐसा वे या तो मजबूत बैंकों के साथ विलय करके कर सकते हैं, यदि अधिग्राहक (एक्वायरिंग)बैंक को ऐसे विलयन से कोई लाभ हो रहा हो अथवा गैर-सदस्य जमाराशियों का भुगतान करके और भुगतान प्रणाली से बाहर होकर अपने को स्वैच्छिक रूप सहकारी समिति में बदल सकते हैं। यदि अन्य कोई व्यवहार्य विकल्प नहीं बचा है, तो रिज़र्व बैंक के आदेश से पंजीयक द्वारा उनका परिसमापन भी किया जा सकता है। सितंबर 2007 तक 13 राज्यों ने सहमति ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए थे, जिसमें 92 प्रतिशत से अधिक की कुल जमाराशियों वाले 83 प्रतिशत शहरी सहकारी बैंकों को कवर किया गया। विलय प्रस्तावों को अनापत्ति प्रदान करने संबंधी पारदर्शी और वस्तुनिष्ठ दिशा-निर्देशों को उपलब्ध कराके कमज़ोर इकाइयों के मजबूत में विलय की प्रक्रिया के माध्यम से शहरी सहकारी बैंकों का समेकन (कस्सोलिडेशन) प्रारंभ कर दिया गया है। विलय/ समामेलन संबंधी प्रस्तावों पर विचार करते समय रिज़र्व बैंक जमाकर्ताओं के हित और वित्तीय स्थिरता को ध्यान में रखते हुए वित्तीय पहलुओं तक ही अपना अनुमोदन सीमित रखता है। संबंधित सहकारी समितियों के केंद्रीय पंजीयक/सहकारी समिति पंजीयक द्वारा सांविधिक आदेश जारी करके 30 अक्तूबर 2007 तक कुल 33 विलय किए गए।

6.47 रिज़र्व बैंक यह सुनिश्चित करने के अपने प्रयास जारी रखे कि शहरी सहकारी बैंकों (यूसीबी) को बैंकिंग संस्थानों के सशक्त और स्वस्थ नेटवर्क के रूप में उभारा जाए ताकि वे तत्वतः समाज के मध्य और निम्न मध्य वर्गों तथा सीमांत वर्गों को जरूरत आधारित गुणवत्तावाली बैंकिंग सेवाएं प्रदान कर सके [4]। 'विज़न डॉक्यूमेंट' के अनुसार छोटे-छोटे शहरी सहकारी बैंकों को सुदृढ़ करने के लिए, बैंकों को टियर I शहरी सहकारी बैंक (यूनिट बैंक अर्थात ऐसे बैंक जिनकी शाखा/शाखाएं एक ही जिले में हैं और जिनकी जमाराशियां 100 करोड़ रुपए है) और टियर II बैंक (अर्थात् अन्य सभी शहरी सहकारी बैंक) के रूप में वर्गीकृत किया गया। टियर I और टियर II बैंकों के लिए संशोधित विवेकपूर्ण मानदंडों के अनुसार जहाँ टियर II बैंक 90 दिन के चूक(डेलीक्वेंसी) मानदंड के अधीन हैं जो वाणिज्यिक बैंकों के लिए लागू हैं, टियर I बैंकों के लिए 180 दिन के चूक मानदंड को एक वर्ष और अर्थात् 31 मार्च 2008 तक बढ़ाया गया है। इसका उद्देश्य यह है कि निम्नतर प्रावधानीकरण की आवश्यकताओं के अनुसार छोटे शहरी सहकारी बैंकों को राहत मिले, जिससे लाभ अधिक हो और उसे इन बैंकों के पूंजीगत आधार को बढ़ाने के लिए उपयोग में लाया जा सके।

6.48 यह सुनिश्चित करने के लिए कि उच्च ऋण वृद्धि के वातावरण में आस्ति गुणवत्ता को बनी रहे, एक से अधिक जिलों (जमाराशि का आकार जो भी हो)में कार्यरत टियर II बैंकों और अन्य सभी शहरी सहकारी बैंकों के संबंध में यह निर्णय लिया गया कि विशिष्ट क्षेत्रों अर्थात वैयक्तिक ऋण, पूंजी बाजार एक्सपोजर के रूप में गिने जाने वाले ऋण व अग्रिम तथा वाणिज्यिक स्थावर संपदा ऋण (कॉमर्शियल रियल इस्टेट लोन्स) से संबंधित मानक अग्रिमों पर सामान्य प्रावधानीकरण की आवश्यकता को 1.00 प्रतिशत से बढ़ा कर 2.00 प्रतिशत किया जाए। वाणिज्यिक स्थावर संपदा (कॉमर्शियल रियल इस्टेट) में एक्सपोजर पर जोखिम भार भी 100 प्रतिशत से बढ़ाकर 150 प्रतिशत किया गया है।

वित्तीय संस्थाएं और गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियां

6.49 अर्थव्यवस्था की मध्यम से दीर्घकालिक आवश्यकताओं को पूरा करने में ऐतहासिक रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली वित्तीय संस्थाएं, बदलते परिचालन वातावरण के अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास कर रही हैं। दो बड़ी वित्तीय कंपनियों को पहले ही बैंकों में बदल दिया गया है। रिज़र्व बैंक का यह प्रयास रहा है कि प्रणाली में कार्यरत वित्तीय संस्थाएं अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत रखें। इसके प्रयोजनार्थ बैंकों से संबंधित विवेकशील मानदंडों को उपयुक्त फ़े रबदल के साथ रिज़र्व बैंक वित्तीय संस्थाओं पर भी लागू करके उन्हें मजबूत बना रहा है।

6.50 समूचे वित्तीय क्षेत्र के लिए लागू मानदंडों के अनुसार वित्तीय संस्थाओं के लिए विनियामक मानदंड के क्रमिक उन्नयन के लिए हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंकने अपनी नीतिगत पहल को जारी रखते हुए 2006-07 के दौरान कई कदम उठाए। आय-निर्धारण, आस्ति वर्गीकरण, प्रावधानीकरण और सरकारी गारंटीकृत एक्सपोजरों से जुड़े हुए अन्य मामलों संबंधी मानदंडों को 2006-07 के दौरान संशोधित किया गया था। 31 मार्च 2007 से यदि वित्तीय संस्थान

[4] इन मानदंडों पर इस रिपोर्ट के अध्याय IV में विस्तार से चर्चा की गई है।

को देय ब्याज और/या मूल राशि या कोई अन्य राशि 90 दिन से अधिक के लिए अतिदेय रहती है तो राज्य सरकार गारंटीकृत अग्रिमों और राज्य सरकार गारंटीकृत प्रतिभूतियों में निवेशों के लिए आस्ति वर्गीकरण और प्रावधानीकरण मानदंड लागू होंगे।

6.51 गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थानों द्वारा वित्तीय बिचौलियों के रूप में वित्तीय क्षेत्र के लिए किए गए योगदान को देखते हुए रिज़र्व बैंक गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थानों को वित्तीय रूप से मजबूत इकाई के रूप में विकसित होने पर लगातार बल देता रहा है। वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने हेतु गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) के कार्यकलाप को चुस्त दुरुस्त करने और इस क्षेत्र में विवेकपूर्ण उपायों के कार्यान्वयन का महत्त्व बढ़ जाता है।

6.52 हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक के पर्यवेक्षण का मुख्य ध्यान यह सुनिश्चित करना रहा है कि गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं सुदृढ़ स्थिति में काम करें और अत्यधिक जोखिम से बचें। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1997 में संशोधनों के पश्चात् गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के नियामक ढ़ांचे में काफी परिवर्तन हुए, जिसके द्वारा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक को व्यापक शक्तियां प्रदान की गईं। संशोधित अधिनियम के द्वारा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के लिए यह अनिवार्य हो गया कि वे रिज़र्व बैंक से पंजीयन का प्रमाणपत्र (सीओआर) प्राप्त करें। रिज़र्व बैंक के साथ पंजीकृत गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की कुल संख्या जून 2006 के अंत के 13,014 से घटकर जून 2007 के अंत में 12,968 हो गई। इसके अलावा, कुछ गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों द्वारा अपना कारोबार बदलकर जनता की जमाराशियाँ स्वीकार न करने की गतिविधियों को अपना लिया जिसके कारण जनता से जमा स्वीकार करने वाली कंपनियों की संख्या भी घटी। इस प्रकार कमजोर और अर्थ-अक्षम गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को प्रणाली में से हटाने में मदद मिली।

6.53 एनबीएफसी के संबंध में पर्यवेक्षण का फोकस इस पर बदलता है कि उसकी आस्ति आकार क्या है और क्या वह जनता का पैसा स्वीकार करती है / अपने पास रखती है। जमाकर्ताओं के हितों को सुरक्षित करने के लिए, जनता की जमाराशि स्वीकार करने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के विनियामक मानदंड अपेक्षाकृत अधिक कठोर हैं। तथापि, बड़ी-बड़ी गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां भले ही जनता की जमाराशियां स्वीकार नहीं करें पर सिस्टम के लिहाज से महत्वपूर्ण होती हैं। इसको देखते हुए, सितंबर 2004 को समाप्त तिमाही की शुरुआत से जनता की जमाराशियां स्वीकार न करने वाली /पास न रखने वाली तथा 500 करोड़ रुपए और इससे अधिक की संपत्ति के आकार वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के लिए एक रिपोर्टिंग प्रणाली शुरू की गई। 2006-07 के दौरान, प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के नियामक ढाँचे को मजबूत करने के लिए की गयी एक बड़ी पहल थी -विवेकपूर्ण दिशानिर्देश जारी करना, जिससे नियामक फाँक को घटाया जा सके। प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण जमाराशि न लेने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को भी परिभाषित किया गया और इन कंपनियों के लिए विवेकशील मानदंड निर्धारित किए गए।

6.54 पिछले लेखा-परीक्षित तुलन पत्र के अनुसार 100 करोड़ रुपये और उससे अधिक की आस्तिवाली सभी गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ, जो जमाराशियां स्वीकार नहीं करती, को अब प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण जमाराशि स्वीकार न करनेवाली गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियां (एनबीएफसी-एनडी-एसआइ) माना जाएगा। उनसे अपेक्षित है कि वे 10 प्रतिशत का न्यूनतम सीआरएआर (जोखिम भारित आस्ति की तुलना में पूंजी का अनुपात) बनाये रखें। इसके अतिरिक्त, जमाराशि स्वीकार करनेवाली गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को कहा गया कि 100 करोड़ रुपये और उससे अधिक की कुल आस्तियोंवाली सभी गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों और अवशिष्ट गैर-बैंकिंग कंपनियों (आरबीएफ़सी)को पूंजी बाजार ऋण एक्सपोजर संबंधी विवरणी संबंधित माह की समाप्ति के सात दिन के भीतर निर्धारित फार्मेट में मासिक आधार पर प्रस्तुत करनी होगी। संशोधित मानदंड पर आधारित ऐसी पहली विवरणी 30 अप्रैल 2007 को समाप्त माह तक प्रस्तुत की गई थी।

निक्षेप बीमा

6.55 निक्षेप बीमा प्रणाली (डीआइएस) का प्रमुख उद्देश्य देश की वित्तीय प्रणाली की स्थिरता बनाए रखना और बैंकों के असफल होने की स्थिति में उनके वित्तीय रूप से कमजोर जमाकर्ताओं को हानि से बचाना है। निक्षेप बीमा प्रणाली की सर्वोत्तम प्रथाओं के संबंध में अंतरराष्ट्रीय निक्षेप बीमाकर्ता संघ के दिशा-निर्देशों के अनुसार निक्षेप बीमा प्रणाली को सुरचित वित्तीय सुरक्षा नेट का भाग बनने की आवश्यकता है, जिसके समर्थन में विवेकसम्मत विनियम और पर्यवेक्षण, प्रवर्तनीय प्रभावी कानून और स्वस्थ लेखांकन एवं प्रकटीकरण नियमों का होना आवश्यक है (बॉक्स VI.5)।

6.56 भारत में, निक्षेप बीमा और ऋण प्रत्यय गारंटी निगम, जो 1978 में वर्तमान स्वरूप में बना, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और स्थानीय क्षेत्र बैंक तथा अधिकांश सहकारी बैंकों सहित सभी वाणिज्यिक बैंकों की जमाओं को निर्धारित राशि तक बीमा सुरक्षा प्रदान करता है।

6.57 भारत में निक्षेप बीमा प्रणाली को आसानी से समझने के लिए 2006-07 में डीआइसीजीसी पर एक पुस्तिका के साथ एक मार्गदर्शिका प्रकाशित की गई थी। इससे बैंक ग्राहकों में जागरूकता पैदा करने और विश्वास दिलाने में आसानी हुई। बैंक के परिसमापन की अवस्था में बैंक ग्राहकों को और राहत दिलाने के लिए डीआइसीजीसी ने 27 अप्रैल 2007 को संयुक्त खाता धारकों के दावों का निपटान करने के लिए अपनी नीति की समीक्षा की। संशोधित नीति के अनुसार, दो या उससे अधिक वैयक्तिकों के दो अलग संयुक्त

बॉक्स VI.5: एक सफल जमा बीमा योजना (डीआइएस) की विशेषताएं और डीआइसीजीसी की स्थिति

अप्रत्यक्ष सुरक्षा की तुलना में एक स्पष्ट और सीमित जमा बीमा को तरजीह दी जानी चाहिए क्योंकि यह जमाकर्ताओं के प्रति प्राधिकारियों के दायित्व को स्पष्ट करती है और अपनी इच्छा से लिए जाने वाले ऐसे निर्णयों का स्कोप कम कर देती है जिनके कारण मनमानी की जा सके। जमाराशि बीमाकर्ताओं को अधिदेश प्राप्त हैं जो सीमित तथाकथित पेबाक्स प्रणाली से लेकर व्यापक शक्तियों तथा उत्तरदायित्वों जैसे कि जोखिम को न्यूनतम रखने के लिए होते हैं और इन दोनों के बीच में कई तरह के सम्मिश्रण होते हैं। पेबाक्स प्रणलियाँ मुख्यतया बैंक के बंद हो जाने के बाद जमाकर्ताओं के दावों का भुगतान करने तक सीमित होती हैं और सामान्यतया उनके पास विवेकपूर्ण विनियामक या पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व या हस्तक्षेप की शक्तियां नहीं होतीं। जोखिम को न्यूनतम रखने वाले जमाराशि बीमाकर्ता को कुछ अधिक व्यापक अधिदेश प्राप्त होता है और इसीलिए और अधिक शक्तियां भी। लेकिन हाल ही के वर्षों में ध्यान एक स्पष्ट जमाराशि बीमा योजना स्थापित करने से हट कर संस्थागत विवरणों जैसे कि कवरेज, सदस्यता, फ़ंडिंग और प्रशासन पर केंद्रित हो गया है।

सामान्य रूप से, सदस्यता अनिवार्य होनी चाहिए ताकि प्रतिकूल चयन से बचा जा सके जैसा कि एक स्वैच्छिक प्रणाली में असफलता की लागत उच्च होने पर मजबूत बैंक सदस्यता छोड़ सकते हैं और यह जमाराशि बीमा प्रणाली की प्रभावकारिता तथा वित्तीय शोधक्षमता को प्रभावित कर सकता है। जमाराशि बीमा योजना की प्रभावकारिता के लिए तथा जनता का विश्वास बनाए रखने के लिए मजबूत फ़ंडिंग व्यवस्थाएं होनी आवश्यक हैं और इसमें सभी आवश्यक फ़ंडिंग व्यवस्थाएं होनी चाहिए ताकि किसी बैंक के फेल हो जाने के बाद जमाकर्ताओं के दावों की शीघ्रता से प्रतिपूर्ति की जा सके। नीतिनिर्माताओं के पास यह विकल्प है कि एक फ्लैट-दर प्रीमियम प्रणाली अपना लें या एक प्रीमियम प्रणाली ऐसी अपनाएं जो अलग-अलग बैंकों के जोखिम प्रोफाइल पर आधारित हो। जमाराशि बीमा प्रणालियां दो श्रेणियों में आती हैं, अर्थात् (i) वे जिनकी फ़ंडिंग बैंकों द्वारा की जाती है और (ii) स्थाई रूप से नहीं रखी गयी उधार पर दी गई निधियों वाली प्रणाली, जहां किसी बैंक के फेल हो जाने के बाद सदस्यों को निधि में अंशदान करना होता है।

इस संदर्भ में, कुछ अध्ययन दिखलाते हैं कि जमाराशि बीमा योजनाओं की कवरेज और फ़ंडिंग का उस संभाव्यता पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता है जिसमें से होकर कोई देश बैंकिंग संकट से गुजरता है, जबकि कुछ अन्य अध्ययन दिखलाते हैं कि बैंकों की तुलना में जमाकर्ताओं द्वारा बाजार अनुशासन के सीमा निर्धारण में कवरेज और फ़ंडिंग अधिक महत्वपूर्ण हैं।

गारशिया (1999) का मत था कि यदि सदस्यता अनिवार्य होती है, नैतिक गड़बड़ियों को हतोत्साहित के लिए कवरेज कम है और यदि प्रतिकूल चयन से बचने के लिए बीमा प्रीमियम में जोखिम-समायोजन है तो जमाराशि बीमा योजना में प्रोत्साहन लाभ की अधिक गुंजाइश रहेगी। जोखिम-समायोजन के पीछे उद्देश्य यह है कि जमाराशि बीमा योजना के संसाधनों की अधिक हानि करने की संभावना वाले प्रतिस्पर्धियों की अपेक्षा मजबूत संस्थाओं को कम प्रीमियम देने की अनुमति देकर मजबूत संस्थाओं द्वारा कमजोर संस्थाओं को दी गई सब्सिडी को कम किया जा सके। इसके अतिरिक्त, प्रणाली में जमाकर्ताओं का विश्वास होना चाहिए जिसके लिए जरूरी है कि बीमाशुदा जमाराशियों का भुगतान शीघ्रता से करने के लिए योजना (डीआइएस) प्रशासनिक रूप से सक्षम हो और यह पर्याप्त रूप से फ़ंडेड हो ताकि असफल हुई संस्थाओं के बारे में अविलंब कार्रवाई कर सके।

किसी जमाराशि बीमा योजना के प्रभावी होने के लिए, यह आवश्यक है कि जनता को उसके लाभ और उसकी कमियों के बारे में जानकारी हो। किसी असफलता पर प्रभावी कार्रवाई की प्रक्रिया के उद्देश्य हैं - जमाराशि बीमाकर्ता के उत्तरदायित्व पूरा करना; यह सुनिश्चित करना कि जमाकर्ता को शीघ्रता से और सही प्रतिपूर्ति की जाए; समाधान लागतों (रिसोल्यूशन कॉस्ट्स)और बाजार गड़बड़ियों को न्यूनतम रखना; आस्तियो की वसूली को अधिकतम करना; वास्तविक दावों का समय पर और सक्रिय आधार पर भुगतान करना; और लापरवाही या अन्य किसी गलती के मामले में कानूनी कार्रवाई के माध्यम से अनुशासन को मजबूत करना, नीति निर्माताओं को वर्तमान जमाकर्ता प्राथमिकता कानूनों या असफलता पर कार्रवाई के लागत (रिसोल्यूशन कॉस्ट्स) के कानूनों के संभावित प्रभावों का पता होना चाहिए और यदि जमाकर्ता तथा जमा बीमाकर्ता को वसूली में कुछ उच्चतर अधिकार दिए गए हैं तो अन्य प्रतिभूत दावेदारों को मुआवजा देने से पहले उनके दावों का पूर्ण भुगतान किया जाना चाहिए।

भारत में जमाराशि बीमा योजना की कई विशेषताओं की तुलना अन्य अर्थव्यवस्थाओं की विशेषताओं से की जा सकती है जैसे कि इसका स्पष्ट स्वरूप, अनिवार्य सदस्यता और संयुक्त फ़ंडिंग। लेकिन प्रमुख अंतर जोखिम समायोजित प्रीमियमों की अनुपस्थिति के संबंध में है। यह उल्लेख किया जा सकता है कि जोखिम-समायोजित प्रीमियम वाले अधिकांश देश वे हैं जहां जमाराशि बीमा योजनाएं 1990 के दशक में बनाई गईं/संशोधित की गई थीं।

सारणी I : जमा बीमा योजना की विशेषताएं

योजना की विशेषताएं	भारत	यूरोपियन संघ	अमरीका	वैश्विक औसत
स्पष्ट	हां	हां	हां	सभी 68 देश
कवरेज सीमा	1,00,000 रु.	20,000 यूरो	1,00,000 अमरीकी डॉलर	प्रति व्यक्ति जीडीपी का तीन गुणा
सह-बीमा	नहीं	10 प्रतिशत	नहीं	68 में से 17 देशों में सह-बीमा है
विदेशी मुद्रा जमाराशि की कवरेज	हां	छोड़ा जा सकता है	हां	68 में से 48 देशों में कवर किया गया है
अंतर-बैंक जमाराशि का कवरेज	नहीं	नहीं	हां	68 में से 18 देशों में कवर किया गया है
फ़ंडिंग का स्रोत*	संयुक्त (सार्वजनिक+ निजी)	विनियमित नहीं	संयुक्त	संयुक्त प्राइवेट:15; संयुक्त:51; सार्वजनिक:1
प्रशासन	सार्वजनिक	विनियमित नहीं	सार्वजनिक	प्राइवेट:11; संयुक्त:24; सार्वजनिक:33
सदस्यता	अनिवार्य	अनिवार्य	अनिवार्य	68 में से 55 देशों में अनिवार्य
जोखिम-समायोजित प्रीमियम	नहीं	विनियमित नहीं	हां	68 में से 21 देशों में जोखिम-समायोजित प्रीमियम है
पे बाक्स/ जोखिम कम करनेवाले	पे बाक्स	..	जोखिम कम करने वाले	..
लक्ष्य निधि (फ़ंड)अनुपात	नहीं	..	1.15 प्रतिशत–1.50 प्रतिशत	..

.. : एक देश के लिए उपलब्ध नहीं

संदर्भ:

बेक, टी (2000) 'डिपाजिट इन्शोरेंस ऐज़ प्राइवेट क्लब: इज जर्मनी अ मॉडल ?' (www.worldbank. org)

डेमिरगुक - कुंट, ए एण्ड ई, डेट्रागिअच (2000) डज़ डिपाजिट इंश्योरेंस इन्क्रीज बैंकिंग सिस्टम स्टेबिलिटी ?ड आइएमएफ वर्किंग पेपर नं 3 गार्शिया, जी जी एच (2000) 'डिपाज़िट इंश्योरेंस - ऐक्चुअल ऐण्ड गुड प्रैक्टिसेज़', आइएमएफ आकेजनल पेपर नं.197, वाशिंगटन डी सी

आरबीआइ (1999), रिपोर्ट आन रिफार्म्स इन डिपाजिट इंश्योरेंस इन इंडिया (अध्यक्ष: श्री जगदीश कपूर), आरबीआइ: मुंबई

खातों में रखी गई जमाओं को दो या अधिक खाते माना जाएगा और संयुक्त खाते का प्रत्येक प्रकार एक लाख रुपए तक के दावे के लिए पात्र होगा, इसके विपरीत दोनों / पहले के सभी खातों के लिए कुल राशि के केवल एक लाख तक दावे स्वीकृत होंगे। इसके अतिरिक्त, परिसमापन आदेश जारी करने और जमाकर्ता को वास्तविक प्रतिपूर्ति करने के बीच के समय को कम करने के लिए निगम ने बीमाकृत बैंकों के जमाकर्ताओं के दावों के शीघ्र निपटान के संबध में एक नीति बनाई है।

3. भारतीय बैंकिंग क्षेत्र का आधार (बेंचमार्क)

6.58 वित्तीय स्थिरता के लिए पहली आवश्यकता बैंकिंग और वित्तीय संस्थानों की वित्तीय सुदृढ़ता है। वित्तीय वैश्वीकरण के बढ़ते हुए स्तर ने घरेलू बैंकिंग और वित्तीय संस्थानों को प्रतिस्पर्धा के अंतर्राष्ट्रीय मंच पर लाकर रख दिया है, जिससे वे वित्तीय सुदृढ़ता के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय मानकों को पूरा करने के लिए विवश हो गए हैं। भारतीय बैंकिंग प्रणाली में निजी बैंकों के प्रवेश तथा विदेशी बैंकों की संख्या बढ़ने से प्रतिस्पर्धा तीव्र हो गई है और लाभ पर दवाब बढ़ गया है। बैंकों को घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय पूंजी बाजार दोनों से पूंजी जुटाने की आवश्यकता है। भारत भी क्रमिक रूप से पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता पद्धति की ओर बढ़ रहा है। पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता संबंधी समिति ने 31 जुलाई 2006 को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में यह पाया है कि एफसीएसी पद्धति के अंतर्गत बैंकिंग प्रणाली में भारी बाजार अस्थिरता दिखाई देगी। इसलिए यह आवश्यक है कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली अधिक प्रभावी पर्यवेक्षी और विनियामक प्रणाली के साथ बढ़ी हुई जोखिम प्रबंधन क्षमताओं को आत्मसात करे। इन गतिविधियों को देखते हुए भारतीय बैंकिंग प्रणाली को कार्यक्षमता, लाभप्रदता और वित्तीय सुदृढ़ता के अंतरराष्ट्रीय बेंचमार्क को पूरा करना आवश्यक हो गया है।

6.59 अत: इस खंड में विभिन्न वित्तीय संकेतकों के अनुसार भारतीय बैंकों के लिए वैश्विक न्यूनतम मानदंडों की तुलना में न्यूनतम मानदंड बनाने का प्रयास किया गया है। भारत में बैंकिंग प्रणाली को मजबूती प्रदान करने के लिए कई वर्षों से की गई पहलों के परिणामस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र के वित्तीय कार्यनिष्पादन में पर्याप्त सुधार हुआ है।

आस्तियों पर प्रतिलाभ

6.60 बैंकों की कुल आस्तियों पर प्रतिलाभ, जिसे कुल आस्तियों के प्रति निवल लाभों के अनुपात के रूप में परिभाषित किया गया है, लाभप्रदता के लिए अत्यधिक उपयोग में लाया जानेवाला संकेतक हैं। आस्तियों पर उच्चतर प्रतिलाभ बैंकिंग प्रणाली की वाणिज्यिक सुदृढ़ता को इंगित करता है। वित्तीय स्थिरता की दृष्टि से, आस्तियों पर उच्च प्रतिलाभ प्रणाली को संभावित आघातों की स्थिति में राहत प्रदान करता है अर्थात बैंक प्रतिकूल आघातों के बावजूद वित्तीय मध्यस्थता की प्रक्रिया को जोखिम में डाले बिना परिचालन करने में समर्थ होंगे। हाल के वर्षों में भारतीय अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ में पर्याप्त सुधार दिखाई दिया है और वह मार्च 2007 के अंत तक 0.9 प्रतिशत तक पहुँच गया है; वैश्विक रूप से इसकी सीमा 2006 में 4.3 प्रतिशत से 0.2 प्रतिशत तक रही है (सारणी VI.3)।

6.61 बैंकों के उपार्जन कई घटकों द्वारा प्रभावित होते हैं, जिसे मोटे तौर पर संरचनात्मक और गौण के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। उपार्जन यदि गौण घटकों से ज्यादा संरचनात्मक घटकों द्वारा अधिक प्रभावित होते हैं तो वे आसानी से धारणीय होते हैं (बॉक्स VI.6)।

अनर्जक ऋण

6.62 बैंकों की आस्तियों की गुणवत्ता बैंकिंग प्रणाली की वित्तीय स्थिति और इस प्रकार वित्तीय स्थिरता का महत्वपूर्ण संकेतक है। कुल अग्रिमों के प्रति अनर्जक ऋणों का अनुपात बैंकों की आस्तियों की गुणवत्ता का आकलन करने का सामान्य उपाय है। निम्न कुल

सारणी VI.3: चयनित देशों की तुलना में भारतीय बैंकों की आस्तियों पर प्रतिलाभ

(प्रतिशत)

बैंक समूह/देश	मार्च की समाप्ति पर	
	2001	2007
1	2	3
भारत		
सरकारी क्षेत्र के बैंक	0.4	0.8
निजी बैंक	0.7	0.9
पुराने निजी बैंक	0.6	0.7
नए निजी बैंक	0.8	0.9
विदेशी बैंक	0.9	1.7
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	***0.5***	***0.9***
उभरते हुए बाजार		
अर्जेंटिना	0.0	2.1
ब्राजील	-0.1	2.1
मेक्सिको	0.8	3.2
कोरिया	0.7	1.1
दक्षिण अफ्रीका	0.8	1.4
विकसित देश		
यू.एस.	1.1	1.2
यू.के.	0.5	0.5*
जापान	-0.6	0.4*
कॅनाडा	0.7	1.0*
आस्ट्रेलिया	1.3	1.8#
2006 के लिए वैश्विक सीमा [0.2 (ट्यूनीशिया) से 4.3 (सऊदी अरब और घाना)]		

* : 2006 से संबंधित # : 2005 से संबंधित

स्रोत : 1. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट; अप्रैल और सितंबर 2007; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।
2. भारत में बैंकों का तुलनपत्र।

बॉक्स VI.6: आय के संरचनात्मक निर्धारक तत्वों पर आधारित बैंक के उपार्जनों का आकलन

बैंक उपार्जनों के स्वरूपों का आकलन पर्यवेक्षण और पर्यवेक्षी क्रम-निर्धारण प्रणाली के अधिकांश मॉडलों का एक अंगभूत भाग है। उपार्जनों की कमियों का पता लगने पर बैंक की शोधक्षमता पर आए गंभीर खतरे से पहले और इसके द्वारा लाभप्रदता प्राप्त करने के प्रयास में बढ़ी हुई जोखिमों का आकलन करने से पहले पर्यवेक्षक गंभीरतापूर्वक कार्रवाई करता है। हाल के वर्षों में कुछ कमजोर अनुसूचित वाणिज्य बैंकों जैसे भारत ओवरसीज़ बैंक, सांगली बैंक लि., गणेश बैंक ऑफ कुरूंदवाड और यूनाइटेड वेस्टर्न बैंक का समामेलन, भारतीय संदर्भ में ऐसे विश्लेषण के व्यापक प्रासंगिकता को दर्शाता है।

अक्सर यह पाया गया है कि बैंक जमाकर्ताओं का विश्वास बनाए रखने, बाजार में अपने शेयरों को अवमूल्यन से बचाने या पर्यवेक्षी कारवाई से बचने जैसे विभिन्न कारणों से अपनी हानियों को छिपाने का प्रयास कर सकते हैं। कुछ बैंक कुछ अधिक समय तक अपनी हानियां छिपाने में समर्थ हैं। अंततः कोई निवल हानि रिपोर्ट किए बिना ही वित्तीय कमजोरियों के कारण उनका कभी भी परिसमापन कर दिया जाता है। यह जानना महत्वपूर्ण है कि उक्त घटकों को ध्यान में रखते हुए बैंक अपनी आय को किस तरह जुटाते हैं ।

यदि बैंक सुवहनीय मूल कारोबार स्रोतों से पर्याप्त आय जुटाने में समर्थ होता हैं जिससे वह अपने अधिकतर परिचालन व्ययों, प्रावधानों और करों को पूरा कर सके तथा पूँजी पर पर्याप्त प्रतिलाभ प्रदान कर सके तो यह बैंक की अर्जन क्षमता को दर्शाता है। विकल्पतः यदि बैंक गैर आवर्ती आय पर अधिक निर्भर रहता है, तो यह अर्जन दुर्बलताओं का संकेत है। इसके अलावा, बैंक की आय में इसकी विभिन्न गतिविधियों का सापेक्षिक योगदान, केवल मात्रा पर आधारित विशेष आकलन के बजाय, इस बात का एक बेहतर संकेतक हो सकता है कि विभिन्न गतिविधियों के बीच जोखिम का कैसे वितरण हुआ है।

रोज़ा कुटो (2002) द्वारा प्रस्तावित विश्लेषणात्मक संरचना में, आय और व्यय की मदें दो बुनियादी वर्गों में वर्गीकृत की गई हैं: लाभप्रदता के ढांचागत निर्धारक और लाभप्रदता के गौण निर्धारक। लाभप्रदता के ढांचागत निर्धारक आय और व्यय की वे मदें हैं जो इन तीन शर्तों को पूरा करती हैं: (i) वे जो किसी बैंक की परिचालनात्मक गतिविधियों से उत्पन्न होती हैं; (ii) आय के मामले में जो समुचित रूप से निरंतर बनी रहने योग्य एवं व्यय के मामले में आवर्ती मानी जाती हैं; तथा (iii) जो विशेष रूप से गलत-बयानी के अधीन न हों। निवल ब्याज आय, शुल्क आय और परिचालन व्यय लाभप्रदता के ढांचागत निर्धारक हैं। वे बैंक की आय और व्यय की मुख्य मदें हैं और वे आवश्यक बैंकिंग कारकों जैसे परिसंपत्ति/ग्राहक आधार का आकार, लाभ मार्जिन, पूंजीकरण और लागत क्षमता द्वारा निर्धारित होती हैं।

प्रासंगिक कारोबार स्थितियों में परिवर्तनों के प्रति बैंक अर्जनों की संवेदनशीलता का मूल्यांकन जोखिम निर्धारण का एक महत्वपूर्ण संकेतक बन गया है। अर्जन के लिए ढांचागत निर्धारकों के रूप में पहचानी गयी चर-वस्तुओं का उपयोग बैंक की लाभप्रदता संबंधी कारोबार स्थितियों में अपेक्षित अथवा संभावित परिवर्तनों के प्रभाव का पूर्वानुमान लगाने के लिए किया जाता है। विशेष रूप से अतिसंवेदनशील स्थितियों वाले तत्वों की पहचान और निगरानी की दृष्टि से बैंकों की सक्षमता का निर्धारण करने के लिए इस प्रक्रिया को प्रासंगिक पाया गया है।

परिचालन आय और व्यय की कुछ बहुत ही प्रासंगिक मदों को, जैसे प्रावधान प्रभार और ब्याज दर पर निवेश तथा विदेशी मुद्रा जोखिम पर प्रभाव को उनके

सारणी 1: आय विवरण के लिए प्रस्तावित ढांचा

ढांचागत	निवल ब्याज आय
	शुल्क आय
	परिचालन व्यय
	सकल परिचालन आय
गौण	ऋण हानियों के लिए प्रावधान
	अन्य गौण व्यय
	गौण प्रभारों के बाद आय
	खजाना परिणाम
	अन्य गौण आय
	बैंकिंग गतिविधियों से लाभ/(हानि)
	गैर-बैंकिंग सहायक संस्थाओं के परिणाम
	कर पूर्व लाभ/(हानि)
	आय कर
	निवल लाभ/(हानि)

अनावर्ती होने की वजह से अथवा गलत बयानी के अधीन गौण निर्धारकों के रूप में माना गया है। गौण मदों की आम तौर पर बहुत कुछ अस्थिर प्रकृति होती है और उनका एक ही अवधि के दौरान के लाभों पर भारी प्रभाव पड़ सकता है। गैर-परिचालन आय मुख्य रूप से सहायक संस्थाओं और ऐसी संपत्ति में निवेशों से उत्पन्न होती है जो बैंकिंग कारोबार से संबंधित नहीं होते हैं। अधिकांश देश इस प्रकार के निवेशों पर रोक लगा देते हैं अथवा इनके लिए बहुत ही सख्त सीमाएं निर्धारित कर देते हैं। वे किसी बैंक के उसी पूंजी आधार में भागीदारी करते हुए पूर्ण रूप से एक अलग उद्यम स्थापित कर लेते हैं और इसलिए उनकी कमाई और पूंजी को अलग कर लेना चाहिए एवं उसका स्वतंत्र रूप से विश्लेषण करना चाहिए। ऋण हानियों और आकस्मिक देयताओं, आस्थगित व्ययों, सुद्भाव परिशोधन, आकस्मिक परिसंपत्तियों के लिए प्रावधान तथा व्यापार के परिणाम एवं प्रतिभूतियों के बाजार मूल्य में घट-बढ़ मुख्य आय और व्यय की मदें हैं जो खास तौर से गलतबयानी के अधीन पायी गई हैं।

किसी बैंक अथवा किसी उद्यम की अर्जन-क्षमता का निर्धारण करना एक अत्यंत कठिन कार्य है। सही जानकारी अथवा विश्लेषणात्मक कौशल के अभाव में इस प्रकार के निर्धारण के निष्कर्ष आसानी से लक्ष्य के परे सकते हैं और कारोबार शर्तों में उल्लेखनीय परिवर्तनों के कारण वे शीघ्र ही अप्रासंगिक भी हो सकते हैं। कोई भी विश्लेषणात्मक ढांचा भविष्य में एक निश्चित अवधि के लिए परिणामों का सही पूर्वानुमान प्रस्तुत नहीं करता है। यद्यपि बैंक परिणामों की सही भविष्यवाणी करना संभव नहीं है, अनेक प्रासंगिक स्थितियों में यह संभव है कि अर्जन करने की बैंक की क्षमता के बारे में एक सुस्थापित निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके और जांच के अन्य क्षेत्रों के लिए भी उपयोगी जानकारी प्रस्तुत की जा सके।

संदर्भ:

एंथनी साउंडर्स (1999), फाइनेंशियल इंस्टीट्यूशन्स मैनेजमेंट, इरविन/मैक्ग्रा-हिल, तीसरा संस्करण।

रोज़ा कुटो, रॉड्रिगो लुइस (2000), फ्रेमवर्क फॉर दि असेसमेन्ट ऑफ बैंक अर्निंग्ज, एफएसआइ अवार्ड 2002 विनिंग पेपर, फाइनेंशियल स्टेबिलिटी इंस्टीट्यूट।

अग्रिमों के प्रति अनर्जक ऋणों (एनपीएल) का अनुपात बैंक द्वारा अपनायी गई विवेकपूर्ण कारोबारी रणनीति को दर्शाता है। देश में ऋणों की वसूली के लिए विधिक ढाँचा बैंकिंग प्रणाली की कुल अग्रिमों के प्रति अनर्जक आस्तियों के भार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। भारत में, सरकार और रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए कई उपायों से अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का मार्च 1997 के अंत में सकल एन पी

सारणी VI.4: चयनित देशों की तुलना में भारतीय बैंकों के कुल अग्रिमों के लिए सकल अनर्जक ऋणों का अनुपात

(प्रतिशत)

बैंक समूह/देश	मार्च की समाप्ति पर	
	2001	2007
1	2	3
भारत		
सरकारी क्षेत्र के बैंक	12.4	2.7
निजी बैंक	8.4	2.2
पुराने निजी बैंक	10.9	3.1
नए निजी बैंक	5.1	1.9
विदेशी बैंक	6.8	1.8
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	***11.4***	***2.5***
उभरते हुए बाजार		
अर्जेंटीना	13.1	3.2
ब्राजील	5.6	4.0
मैक्सिको	5.1	2.2
कोरिया	3.4	0.8
दक्षिण अफ्रीका	3.1	1.1
विकसित देश		
यू.एस.	1.3	0.8
यू.के.	2.6	0.9
जापान	8.4	2.5*
कनाडा	1.5	0.4*
आस्ट्रेलिया	0.6	0.2
2006 के लिए वैश्विक स्तर [0.2 (इस्टोनिया, लक्सेंबर्ग) से 24.7 (मिश्र)]		

* : 2006 से संबंधित आंकड़े

स्रोत : 1. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट; अप्रैल और सितंबर 2007; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष
2. भारत स्थित बैंकों के तुलनपत्र।

सारणी VI.5: अनर्जक ऋण अनुपात के लिए प्रावधान - चयनित देशों की तुलना में भारतीय बैंक

(प्रतिशत)

बैंक समूह/देश	मार्च की समाप्ति पर	
	2004	2007
1	2	3
भारत		
सरकारी क्षेत्र के बैंक	58.4	56.8
निजी बैंक		
पुराने निजी बैंक	47.0	66.0
नए निजी बैंक	40.6	49.1
विदेशी बैंक	54.8	51.1
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	***55.9***	***56.1***
उभरते हुए बाजार		
अर्जेंटीना	102.9	132.3
ब्राजील	177.5	153.0
मेक्सिको	201.8	194.7
कोरिया	104.5	177.7
दक्षिण अफ्रीका	61.3	64.3#
विकसित देश		
यू.एस.	168.1	129.9
यू.के.	64.5	56.1#
जापान	26.8	30.3 *
कनाडा	47.7	55.3 *
आस्ट्रेलिया	182.9	204.5 *
2006 के लिए वैश्विक स्तर [23.1 यूक्रेन से 229.1 (वेनेज्वेला)]		

* : वर्ष 2006 से संबंधित # : 2005 से संबंधित।

स्रोत : 1. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट; अप्रैल और सितंबर 2007; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष
2. भारत स्थित बैंकों के तुलनपत्र

एल कुल अग्रिमों के 15.7 प्रतिशत स्तर से काफी घटकर मार्च 2001 की समाप्ति पर लगभग 11 प्रतिशत और इसके पश्चात मार्च 2007 की समाप्ति पर 2.5 प्रतिशत रह गया। एनपीएल का वैश्विक स्तर 2006 में 0.2 प्रतिशत और 24.7 प्रतिशत के बीच में रहा (सारणी VI.4)।

अनर्जक ऋणों के लिए प्रावधान

6.63 अनर्जक ऋणों के लिए प्रावधानीकरण का अनुपात आस्ति मूल्य में हुई हानियों को रोकने के लिए बैंक की क्षमता को प्रदर्शित करता है। बैंक के तुलन पत्र की अतिसंवेदन शीलता को उस सीमा तक कम किया जा सकता है, जिस सीमा तक अनर्जक ऋण हानि प्रावधानों द्वारा कवर किए गए हों। अनर्जक ऋणों के प्रति प्रावधानीकरण का कम अनुपात बैंकिंग प्रणाली को आघातों के प्रति अतिसंवेदनशील बना देता है। भारतीय अनुसूचित वाणिज्य बैंकों ने मार्च 2007की समाप्ति पर अनर्जक आस्तियों के 56.1 प्रतिशत का प्रावधानीकरण बनाए रखा जिसकी तुलना वैश्विक मानकों के साथ की जा सकती थी (सारणी VI.5)।

पूंजी पर्याप्तता अनुपात

6.64 बैंक पूंजी का उपयोग बैंक की सुदृढ़ता के संकेतक के रूप में किया जाता है क्योंकि बैंक द्वारा उठायी गई हानियों के विरुद्ध अंतिम सुरक्षा के रूप में इसकी भूमिका होती है। भावी हानियों की भरपाई करने के लिए पूंजी की न्यूनतम राशि के बारे में 1988 के बासेल समझौते के अनुसार सफलतापूर्वक तालमेल होने तक राष्ट्रीय विनियामक अलग-अलग निर्देश दिया करते थे। यह मानते हुए कि न्यूनतम पूंजी बैंकों के समक्ष उपस्थित जोखिम के समरूप हो, बैंकिंग पर्यवेक्षण संबंधी बासेल समिति ने जोखिम भारित आस्ति के लिए 8 प्रतिशत की न्यूनतम पूंजी निर्धारित की। तथापि, मूल ढांचा, ऋण जोखिम के लिए पूंजी कुशन प्रदान करने पर आधारित था। इस प्रकार समझौते को, प्रमुख संविभागों में बाजार जोखिमों की तुलना में पूंजी रक्षा को शामिल करते हुए, 1996 में संशोधित किया गया।

6.65 पूंजी आवश्यकताओं को अब प्रायः वैश्विक स्तर पर स्वीकार किया गया है और अधिकतर देशों ने बासेल जैसे जोखिम

सारणी VI.6: पूंजी पर्याप्तता अनुपात - चयनित देशों की तुलना में भारतीय बैंक

(प्रतिशत)

बैंक समूह/देश	मार्च की समाप्ति पर	
	2001	2007
1	2	3
भारत		
सरकारी क्षेत्र के बैंक	11.2	12.4
निजी बैंक		
पुराने निजी बैंक	11.9	12.1
नए निजी बैंक	11.5	12.0
विदेशी बैंक	12.6	12.4
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	**11.4**	**12.3**
उभरते हुए बाजार		
अर्जेंटीना	–	–
ब्राजील	14.8	18.5
मेक्सिको	13.9	16.1
कोरिया	11.7	13.0
दक्षिण अफ्रीका	11.4	12.7
विकसित देश		
यू.एस.	12.9	13.0
यू.के.	13.2	12.9*
जापान	10.8	13.1*
कनाडा	12.3	12.4
आस्ट्रेलिया	10.4	10.4
2006 के लिए वैश्विक स्तर [7.1 (स्वीडेन) से 34.9 (आर्मेनिया)]		

* : 2005 से संबंधित आंकड़े

स्रोत: 1. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट; अप्रैल और सितंबर 2007; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

2. भारत स्थित बैंकों के तुलनपत्र।

सारणी VI.7: आस्ति की तुलना में पूंजी अनुपात-चयनित देशों की तुलना में भारतीय बैंक

(प्रतिशत)

बैंक समूह/देश	मार्च की समाप्ति पर	
	2001	2007
1	2	3
भारत		
सरकारी क्षेत्र के बैंक	4.8	5.8
निजी बैंक	5.4	6.8
पुराने निजी बैंक	5.4	6.7
नए निजी बैंक	5.5	6.8
विदेशी बैंक	8.8	11.9
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	**5.2**	**6.3**
उभरते हुए बाजार		
अर्जेंटीना	11.9*	13.7
ब्राजील	8.9	9.4
मेक्सिको	9.4	13.2#
कोरिया [1]	7.2@	9.5
दक्षिण अफ्रीका	9.0	7.8#
विकसित देश		
यू.एस.	9.0	10.6
यू.के.	9.7	8.9#
जापान	3.9	5.3
कनाडा	4.6	5.6
आस्ट्रेलिया [2]	5.3	4.9
2006 के लिए वैश्विक स्तर [4.0 (बांगला देश, नीदरलैंड) से 22.0 (आर्मेनिया)]		

@ : 2002 से संबंधित * : 2006 से संबधित

\# : 2006 से संबंधित

नोट : 1. मूल पूंजी अनुपात 2. कुल आस्तियों के प्रति टियर I पूँजी।

स्रोत: 1. वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट; अप्रैल और सितंबर 2007; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

2. भारत स्थित बैंकों का तुलन-पत्र

भारित दृष्टिकोण को अपनाया है। इस समरसता के स्तर ने बैंक की क्षमता की अंतर-बैंक और अंतरदेशीय दोनों दृष्टियों से तुलना करने हेतु सीआरएआर को विश्लेषकों के लिए एक उपयोगी संकेतक बना दिया है। भारतीय संदर्भ में, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की समग्र पूंजी पर्याप्तता 2001 में 11.4 प्रतिशत से सुधरकर 2007 में 12.3 प्रतिशत हो गई जो 8 प्रतिशत के बासेल मानदंड और भारत में बैंकों के 9 प्रतिशत के निर्धारित मानदंड से काफी अधिक थी। इस अनुपात की तुलना अधिकतर उभरते हुए बाजारों तथा विकसित अर्थव्यवस्थाओं के साथ की जा सकती है। 2006 में सी आर ए आर का वैश्विक स्तर 7.1 प्रतिशत से 34.9 प्रतिशत तक अलग-अलग था (सारणी VI.6)।

आस्ति के प्रति पूंजी अनुपात

6.66 बैंकों का आस्ति के प्रति पूँजी का साधारण अनुपात यह दर्शाता है कि बैंकों को कितना लीवरेज प्राप्त है। आस्ति के प्रति पूंजी का कम व्यय अनुपात अधिक लीवरेज और बैंकों की अतिसंवेदनशीलता को दर्शाता है। वैश्विक स्तर पर, 2006 में यह अनुपात 3.7 प्रतिशत तथा 22.9 प्रतिशत के बीच था। कई अन्य देशों की तुलना में भारतीय बैंकों के पास लीवरेज कम है (सारणी VI.7)।

4. वित्तीय बाज़ारों की गतिविधियां

6.67 सुविकसित वित्तीय बाजार संसाधन जुटाने वाले माध्यमों को बहुआयामी बनाते हुए जोखिमों को बड़ी संख्या में पणधारियों के बीच बांट देते हैं। ऐसे बाजारों के अभाव में अर्थव्यवस्था वित्त के लिए बैंक साधनों पर अधिक से अधिक निर्भर होने लगती है। तथापि, इस प्रकार के साक्ष्यों की भरमार है जिनसे यह पता चलता है कि जिन देशों में सुविनियमित बैंक तथा सुचारू रूप से कार्य कर रहे प्रतिभूति बाजार अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, उनको विविधीकृत वित्तीय प्रणाली का लाभ मिलता है। वित्तीय स्थिरता के दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण बात यह है कि बैंकों और प्रतिभूति बाजारों के जोखिम अलग-अलग तरह के होते

हैं। इसलिए, अन्य क्षेत्रों के समान ही वित्तीय ढांचे में, विविधीकरण के कारण व्यावहारिक जोखिम-प्रतिलाभ संतुलन के मोर्चे पर भी अर्थव्यवस्था की स्थिति बेहतरीन होती है। अतः, वित्तीय बाजारों के विकास से संसाधनों को सक्षम मध्यावधि आर्थिक वृद्धि और वित्तीय स्थिरता के अनुरूप कारगर ढंग से आबंटित करना सुविधाजनक हो जाता है। गहन और तरल वित्तीय बाजार ऐसे जोखिम को कम करने में सहायता करते हैं जिनसे 1990 के दशक के मध्य में कई पूर्वी एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय संकट उत्पन्न हुए।

6.68 वित्तीय बाजार बचतकर्ताओं से अतिरिक्त निधियों को लेकर जिनके पास निधियों की कमी है उन्हें देने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। इस प्रकार, वित्तीय बाजार जिन व्यक्तियों के पास निवेश के फायदेमंद अवसर नहीं होते हैं, उनसे निधियां लेकर उसे ऐसे व्यक्तियों को अंतरित करते हैं जिनके पास ऐसे अवसर हैं और इस प्रकार समग्र अर्थव्यवस्था में उच्चतर उत्पादन और कुशलता लाने में योगदान करते हैं। वैश्वीकरण की तेज प्रक्रिया के बाद वित्तीय बाजार निवेश के लाभप्रद अवसर से रिक्त देशों से उच्चतर प्रतिलाभ प्रदान करनेवाले देशों को निधियों के सीमापार अंतरण को सुविधाजनक बनाते हैं। इस प्रकार, वित्तीय बाजार देशों को अपनी उत्पादन क्षमता का स्तर प्राप्त करने में सहायता करते हैं। अतः वित्तीय बाजार वास्तविक अर्थव्यवस्था के साथ जुड़े अपने तारों के माध्यम से उत्पाद तथा रोजगार के स्तर में वृद्धि करते हैं।

6.69 बड़े पैमाने पर वित्तीय मध्यस्थता और निधियों के आपूर्तिकर्ताओं और अंतिम प्रयोक्ताओं के पास उपलब्ध विषम प्रकार की सूचना के कारण एक आधुनिक अर्थव्यवस्था में वित्तीय बाजारों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। इस दृष्टिकोण से, वित्तीय बाजारों का महत्वपूर्ण कार्य है - विभिन्न गतिविधियों के बीच और विशेषकर समय समय पर वास्तविक आर्थिक संसाधनों का कुशल आबंटन। इकानॉमी ऑफ स्केल तथा विषम प्रकार की सूचनाएं जितनी अधिक होंगी उतना ही अधिक मध्यस्थता का लाभ होगा। वित्तीय बाजारों की एक और अति महत्वपूर्ण भूमिका, जो कि वैश्विक स्तर पर एकीकृत अर्थव्यवस्था और वित्तीय प्रणाली में अधिकाधिक महत्वपूर्ण हो गई है, वह है आर्थिक तथा वित्तीय जोखिमों का मूल्यन और प्रबंधन।

6.70 मध्यस्थता के बुनियादी कार्य के निष्पादन में वित्तीय बाजारों की कुशलता को बाजारों में अत्यधिक उतार-चढ़ाव के कारण नुकसान पहुँच सकता है जो बाजार पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है और वित्तीय स्थिरता के लिए एक बड़ा खतरा हो सकता है। वित्तीय बाज़ारों में अत्यधिक उतार-चढ़ाव सामान्यतया आस्ति मूल्य विसंगतियां उत्पन्न करता है और प्रतिपक्ष जोखिम का भी कारण बन सकता है। वित्तीय बाजार को संक्रमण का भी जोखिम होता है। यह वित्तीय बाजारों की गतिविधियों पर लगातार निगरानी रखने की आवश्यकता को रेखांकित करता है ताकि वित्तीय स्थिरता के लिए संभावित जोखिमों की पहले ही पहचान की जा सके और संकट को टालने के लिए वांछित पहल की जा सके। वित्तीय बाजार के आंकड़े भविष्य की गतिविधियों के बारे में प्रत्याशाओं की ओर भी संकेत करते हैं जिनमें वित्तीय प्रणाली के प्रति संभावित जोखिमों के बारे में सूचना होती है। इसलिए, बाजार के संकेतों का इस्तेमाल वित्तीय इकाइयों के तुलनपत्रों के आधार पर बुनियादी तत्वों के पारंपरिक विश्लेषण में पूरक के रूप में किया जा सकता है।

6.71 वित्तीय बाजार मौद्रिक नीति के प्रभावों के संप्रेषण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रभावकारी मौद्रिक संप्रेषण मूल्य पहचान प्रक्रिया पर निर्भर करता है, विशेषकर ब्याज दरों और विनियम दरों के संबंध में। मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन की सफलता इस आकलन पर निर्भर करती है कि नीतिगत कार्रवाइयों के प्रभाव कितनी शीघ्रता से वित्तीय प्रणाली के माध्यम से संप्रेषित किए जाते हैं। विकसित तथा स्थिर वित्तीय बाजार केंद्रीय बैंकों को मौद्रिक परिवर्तनशील तत्वों को अधिक प्रभावशाली ढंग से प्राप्त करने के लिए मौद्रिक नीति के बाजार आधारित लिखतों का प्रयोग करने के भी योग्य बनाते हैं।

6.72 1970 के दशक में तथा बाद के दशकों में कमान अर्थव्यवस्थाओं के मंद समष्टि आर्थिक निष्पादन के फलस्वरूप जोखिम के बारे में सोच में बदलाव आया जिससे यह महसूस किया जाने लगा कि बाजार की प्रक्रिया के जरिए जोखिमों का सामना करने, अंतरण एवं प्रबंध करने के बारे में अलग-अलग आर्थिक एजेंटों को अनुमति देना अधिक कारगर होगा। 1971 में ब्रेटनवुड प्रणाली समाप्त हो जाने के बाद प्रमुख मुद्राओं ने विनिमय दरों की ञ्सामान्य अस्थिरताट के युग में प्रवेश किया गया। सोवियत प्रणाली के समाप्त होने पर पूँजी नियंत्रण के क्रमिक विनियंत्रण, शिथिलीकरण/समाप्ति तथा वैश्वीकरण ने जोखिम प्रबंधन की संकल्पनाओं और प्रथाओं के उदय और विकास के लिए पृष्ठभूमि और प्रोत्साहन का काम किया। नये प्रतिमान की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसका यह अभिप्राय नहीं है कि लोगों को लंबे समय से ज्ञात बीमा जैसे प्रॉडक्ट के द्वारा सभी जोखिमों को समाप्त कर दिया जाए। प्रमुख बात यह है कि जोखिम प्रॉडक्ट के लिए बाजारों में जोखिमों का मूल्यन किया जाए। जोखिम प्रॉडक्ट में गहरे और तरल बाजारों - नकदी और डेरिवेटिव दोनों - के विकास, जिसमें मात्रात्मक वित्त में अप्रत्याशित प्रगति के कारण उछाल आया, ने एक अनुशासन और व्यवसाय के रूप में जोखिम प्रबंधन को संभव बनाया। तथापि, जोखिम प्रबंधन को इस निगाह से देखने का यह अभिप्राय कतई नहीं है कि सरकार या विनियामकों की वित्तीय बाजारों में कोई भूमिका नहीं है[5]।

[5] मोहन, राकेश (2007), खुली बाजार अर्थव्यवस्था में जोखिम प्रबंधन, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, जुलाई।

6.73 हाल के वर्षों में भारत की वित्तीय प्रणाली कुछ और अधिक बाजारोन्मुख हो गई है। वित्तीय संस्थाओं की बाजार गतिविधियों और जोखिमों में तथा बाजार में गैर-वित्तीय निगमों तथा गृहस्थों द्वारा सहभागिता में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इसलिए वित्तीय स्थिरता के लिए बाज़ार आधारित जोखिम अब और प्रासंगिक होते जा रहे हैं।

6.74 रिज़र्व बैंक वित्तीय बाजार की गतिविधियों पर उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए, बारीकी से निगरानी रखता है और साथ ही अपने क्षेत्राधिकार अर्थात् मुद्रा बाजार, सरकारी प्रतिभूति बाजार और विदेशी मुद्रा बाजार[6] जैसे वित्तीय बाजार के विभिन्न क्षेत्रों को और विकसित करने के लिए उपाय करता है। पूंजी बाजार को सेबी विनियमित करता है। 1990 के दशक के प्रारंभ से वित्तीय बाजारों में लागू किए गए विभिन्न सुधारों ने (i) आस्तियों के मूल्यन पर प्रतिबंध हटाने; (ii) संस्थागत तथा प्रौद्योगिकी की बुनियादी सुविधाएं स्थापित करने; (iii) जोखिम प्रबंधन प्रथाओं को सुदृढ़ करने; (iv) बाजार की सूक्ष्म संरचना को सुव्यवस्थित बनाने; (v) ढांचागत सख्तियों को दूर करने के लिए विधिक संरचना में परिवर्तन, तथा (vi) नये सहभागियों तथा लिखतों के जरिए बाजार को व्यापक और गहन बनाने पर ध्यान केंद्रित किया है। रिज़र्व बैंक ने जुलाई 2005 में वित्तीय बाजारों की गतिविधियों की अलग से विशेष निगरानी करने के लिए वित्तीय बाजार विभाग की स्थापना की है।

6.75 वर्ष 2006-07 के दौरान वित्तीय बाजार की गतिविधियों को सामान्य रूप से व्यवस्थित पाया गया। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की गतिविधियों के कारण वर्ष के उत्तरार्द्ध में कुछ उतार-चढ़ाव दिखाई दिया। पूंजीगत प्रवाहों और सरकार के नकदी शेषों में अस्थिरता आ जाने के कारण देशी चलनिधि की स्थितियों में भी कुछ बदलाव आये।

मुद्रा बाजार

6.76 मुद्रा बाजार, जो दिन भर से लेकर एक वर्ष की परिपक्वता की अवधि के लिए अल्पकालिक निधियों का बाजार है, केंद्रीय बैंक को वित्तीय प्रणाली में तरलता की मात्रा और लागत को प्रभावित करने का अवसर प्रदान करता है, जिससे वास्तविक अर्थव्यवस्था को मौद्रिक नीति के प्रभाव प्रेषित होते हैं। केंद्रीय बैंक मुद्रा बाजार दरों का प्रमुख नीति दर के साथ तालमेल बैठाने का प्रयत्न करता है। मुद्रा बाजार में स्थिरता सुनिश्चित करना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि अत्यधिक उतार-चढ़ाव होने से मुद्रा बाजार मौद्रिक नीति के रुझान के संबंध में भ्रामक संकेत दे सकता है। मौद्रिक नीति के अप्रत्यक्ष लिखतों को नीतिगत रूप से वरीयता की दृष्टि से मुद्रा बाजार में स्थिरता के महत्व में वृद्धि हुई है। परिचालन के नए वातावरण में रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति के संचालन में तमाम प्रकार के बाजार आधारित लिखतों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। चूंकि केंद्रीय बैंकों का दीर्घावधि ब्याज दरों पर सीमित नियंत्रण होता है, इसलिए आम तौर पर अपनाई जाने वाली रणनीति केवल अल्पावधि ब्याज दरों पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालने और वित्तीय बाजार के अंतर्संबंध-सूत्रों के माध्यम से बाजार प्रत्याशाओं को दीर्घावधि ब्याज दरों को प्रभावित करने की अनुमति देने की होती है।

6.77 मुद्रा बाजार के महत्व को देखते हुए, इस क्षेत्र के विकास के उपायों के लिए रिज़र्व बैंक सक्रिय रहा है। तदर्थ खजाना बिलों को समाप्त कर देने और खजाना बिलों की नियमित नीलामी प्रारंभ करने से जोखिममुक्त दर के सामने आने का मार्ग प्रशस्त हुआ, जो अन्य मुद्रा बाजार लिखतों के मूल्यन के लिए एक बेंचमार्क बन गया है। साथ ही, देशी बाजारों के वैश्विक स्तर पर और अधिक एकीकृत होने के साथ-साथ मौद्रिक नीति की बढ़ती हुई बाजार उन्मुखता के कारण, रिज़र्व बैंक का जोर मांग मुद्रा बाजार में उधार लेने और देने पर विवेकपूर्ण सीमाएं लगाने, संपार्श्विकीकृत क्षेत्रों की ओर बढ़ने को प्रोत्साहित करने और बाजार जाखिमों से सुरक्षा के लिए डेरिवेटिव लिखतों के विकास पर रहा है। मुद्रा बाजार को व्यापक और गहन बनाने और कुशल मूल्य पहचान प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने के लिए बाजार में और अधिक तरलता उपलब्ध कराने के उद्देश्य के अनुरूप, नये लिखत जैसे कि सीबीएलओ प्रारंभ किए गए हैं। बाजार रिपो और सीबीएलओ जैसे मुद्रा बाजार लिखतों से गैर-बैंकों को अपनी अल्पावधि चलनिधि विसंगतियों का प्रबंधन करने के अवसर प्राप्त हुए हैं और मांग मुद्रा बाजार के एक नितांत अंतर-बैंक बाजार में रुपांतरित हो जाने में सहायता मिली है। भारतीय समाशोधन निगम लि. को एक केंद्रीय प्रतिपक्ष के रूप में संस्थागत रूप मिल जाने के कारण इसमें और सुविधा हुई है। इसके अतिरक्त जारी करने संबंधी मानदंडों को कालांतर में संशोधित किया गया है ताकि बाजार के विभिन्न क्षेत्रों के लिए नीति संबंधी संकेत प्रेषित करने की प्रक्रिया को मजबूत करने के साथ और अधिक व्यापक सहभागिता को प्रोत्साहन दिया जा सके। भुगतान प्रणाली प्रौद्योगिकी के उन्नयन से भी बाजार के सहभागियों को अपने आस्ति देयता प्रबंध में सुधार लाने में सहायता मिली है। इन सभी उपायों ने मुद्रा बाजार को लिखतों और सहभागियों के संदर्भ में व्यापक और

[6] भारत में वित्तीय बाजारों के विकास पर विस्तृत चर्चा के लिए मुद्रा और वित्त का रिपोर्ट, 2005-06, भारतीय रिज़र्व बैंक मई 2007 देखें।

गहन बनाया है, पारदर्शिता में वृद्धि की है और वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करते हुए मौद्रिक नीति का संकेत देने की क्रियाविधि में सुधार किया है।[7]

6.78 समय-समय पर विभिन्न नीतिगत पहलों के कारण देश में सुधार पूर्व स्थिति की तुलना में एक गहन और अधिक तरल मुद्रा बाजार का विकास हुआ है। पिछले कुछ वर्षों में विशेषकर जून 2000 में एलएएफ प्रारंभ करने के बाद मांग दरों में उतार-चढ़ाव कम हुआ है (चार्ट VI.1)। एलएएफ के अंतर्गत, रिज़र्व बैंक अपनी नीति दरें अर्थात रिपो और रिवर्स रिपो दरें निर्धारित करता है और रिपो/रिवर्स रिपो परिचालन करता है, जिससे दिनभर के लिए मुद्रा बाजार दरों के लिए एक निर्धारित सीमा उपलब्ध होती है।

6.79 तथापि, वर्ष के दौरान सरकारी नकदी शेष/कर अंतर्वाह में भारी अस्थिरता, टैप रिपो अंतर्वाह के प्रति उपलब्ध एस एल आर प्रतिभूतियों में कमी, एल ए एफ के अंतर्गत रिवर्स रिपो पर उच्चतम सीमा लगाने और उच्च ऋण वृद्धि के कारण 2006-07 के दौरान मुद्रा बाजार परिस्थितियों में कुछ उतार-चढ़ाव रहा। सितंबर 2006 के मध्य में मांग मुद्रा खंड में रातभर की दरें एलएएफ की रिवर्स रिपो दर के लगभग रहीं। सितंबर 2006 के उत्तरार्द्ध में चलनिधि परिस्थितियां सापेक्षतया सख्त हो गईं, ऐसा अन्य बातों के साथ-साथ उच्चतर ऋण देने के साथ त्योहारों के कारण मुद्रा की मांग और अग्रिम कर बहिर्वाह से हुए चलनिधि दबावों के कारण था। मांग दर अंशतः रिज़र्व बैंक के पास केंद्र के अतिरिक्त नकदी शेषों में कमी के कारण अक्तूबर 2006 के प्रारंभ में रिपो दर से कम हो गई और अक्तूबर के अंत तथा दिसंबर 2006 के दूसरे सप्ताह के बीच अधिकांशतः रिपो-रिवर्स रिपो की निर्धारित सीमा में रही। अग्रिम कर बहिर्वाह और 23 दिसंबर 2006 और 6 जनवरी 2007 को प्रारंभ पखवाड़े से सी आर आर में प्रति 25 आधार अंक वृद्धि की घोषणा (8 दिसंबर 2006) के कारण मांग दर 13 दिसंबर 2006 से बढ़ कर रिपो दर से आगे निकल गई। मांग दर फरवरी 2007 के पहले सप्ताह तक रिपो दर से अधिक बनी रही। रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा परिचालनों के कारण मांग दर फरवरी 2007 के दूसरे सप्ताह तक कम होकर लगभग 6.5 प्रतिशत कम हो गई। मांग दर फरवरी 2007 के मध्य तक पुनः बढ़कर लगभग 8.0 प्रतिशत हो गई किंतु फरवरी 2007 के अंत तक तुरंत कम होकर लगभग 6.0 प्रतिशत रह गई। मांग दर 5-15 मार्च 2007 के बीच रिवर्स रिपो दर से नीचे रहने के पश्चात, बढ़ी क्योंकि चलनिधि दशाएं अग्रिम कर बर्हिवाह, वर्ष के अंत के प्रतिफल और निरंतर ऋण मांग के कारण पुनः सख्त हो गई (चार्ट VI.2)। मांग दर 30 मार्च 2007 को 54.3 प्रतिशत की आंतर-वर्ष ऊँचाई पर पहुँच गई, यह 16-30 मार्च 2007 के दौरान 19.84 प्रतिशत के औसत पर थी।

चार्ट VI.1: मांग दरों की प्रवृत्ति (मासिक औसत)

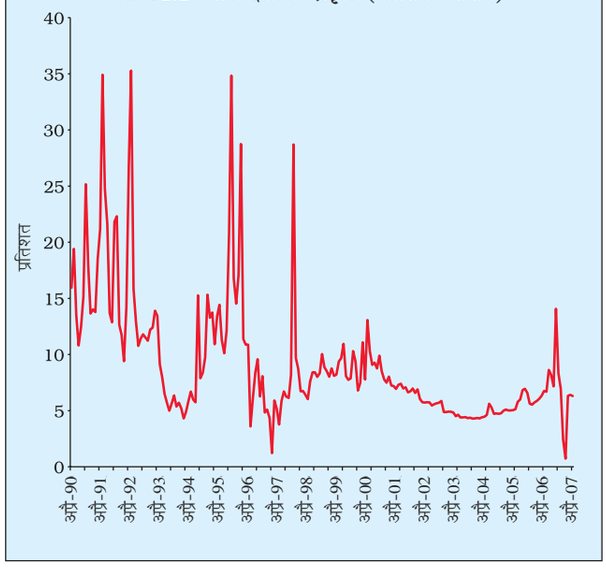

चार्ट VI.2: 2005-07 में मांग दरों की प्रवृत्ति
(मासिक औसत)

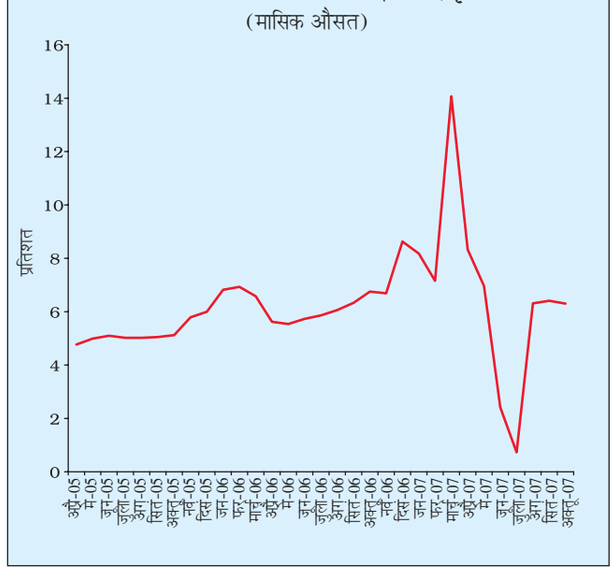

[7] मोहन राकेश (2007), भारत में मुद्रा बाजार का विकास, भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन जून।

6.80 2006-07 के दौरान चलनिधि प्रबंधन को नीतिक्रम में प्राथमिकता प्रदान की गई और रिज़र्व बैंक ने अपने पास उपलब्ध सभी नीतिगत लिखतों का लोचपूर्वक उपयोग करते हुए, एलएएफ, एमएसएस और सीआरआर के माध्यम से बाजार चलनिधि के सक्रिय प्रबंधन की नीति जारी रखी। चलनिधि दशाओं की समीक्षा करने पर, रिज़र्व बैंक ने मार्च 2007 में चलनिधि प्रबंधन परिचालनों में संशोधन घोषित किए। पूंजी प्रवाह की अस्थिरता और टिकाऊपन के मूल्यांकन को देखते हुए, खज़ाना बिलों और दिनांकित प्रतिभूतियों के मिश्रण के साथ एक वर्धित एमएसएस कार्यक्रम बनाया गया जिससे अति अल्पकालिक अंतरों को बराबर करने के लिए एक सुविधा के रूप एलएएफ को बहाल किया जा सके और दैनिक रिवर्स रिपो नीलामियों के माध्यम से अवशोषित की गई चलनिधि को अनुकूलित किया जा सके। समवर्ती रूप से, 5 मार्च 2007 की शुरुआत से दैनिक रिवर्स रिपो अवशोषण अधिकतम 3,000 करोड़ रुपए तक सीमित किए गए। तथापि, रिवर्स रिपो पर अधिकतम सीमा के बावजूद, बैंकों ने मार्च 2007 में वर्ष के अंत में अस्थायी चलनिधि दबावों के कम होने और निरंतर पूंजी अंतर्प्रवाह की पृष्ठभूमि के फलस्वरूप काफी समय तक रिवर्स रिपो विंडों में भारी बोली लगाना जारी रखा।

6.81 वर्ष 2007-08 की पहली तिमाही के दौरान, वित्तीय बाजारों में चलनिधि में काफी उतार-चढ़ाव रहा जो मांग दर में दिखलायी पड़ा। प्रणाली में 28 मई 2007 से अतिरिक्त चलनिधि हो गई जिसके कारण दैनिक आधार पर रिवर्स रिपो के माध्यम से अवशोषण करना आवश्यक हो गया। रिज़र्व बैंक द्वारा 5 मार्च 2007 को एलएएफ के अंतर्गत दैनिक रिवर्स रिपो की निर्धारित की गई 3000 करोड़ रुपये की अधिकतम सीमा से 2007-08 की पहली तिमाही में मांग दरों में तीव्र गिरावट आयी। उस समय की स्थूल आर्थिक तथा समग्र मौद्रिक और चलनिधि परिस्थितियों को देखते हुए, 2007-08 के लिए मौद्रिक नीति के संबंध में वार्षिक वक्तव्य की पहली तिमाही समीक्षा में एलएएफ के अधीन दैनिक रिवर्स रिपो पर 3,000 करोड़ रुपये की अधिकतम सीमा हटाने और 6 अगस्त 2007 से दूसरी एलएएफ को समाप्त करने की घोषणा की गई। इन संशोधनों के साथ, मांग दरें बढ़ गईं और सामान्यतया रिपो/रिवर्स रिपो कारीडोर के भीतर ही रहीं। अगस्त-अक्तूबर 2007 के दौरान औसत मांग दर 6.34 प्रतिशत थी।

6.82 जबकि चलनिधि का मूल स्रोत रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों में हुई पर्याप्त वृद्धि थी, चलनिधि दशाएं केंद्र सरकार द्वारा अर्थोपाय अग्रिमों/ओवरड्राफ्टों का सहारा लेने और केंद्र के नकद शेषों में घटबढ़ से प्रभावित थीं। रिज़र्व बैंक के पास सरकारी नकदी शेषों में हाल में काफी अस्थिरता दिखी है। प्रथम, परिचालनात्मक आवश्यकताओं से जिसकी भविष्यवाणी करना कठिन है, (वेतन भुगतानों, कूपन/ब्याज भुगतानों, ऋणों की चुकौती और इसी तरह अन्य को छोड़कर), सरकार को रिज़र्व बैंक के पास पर्याप्त नकदी बनाए रखनी पड़ती है। दूसरे, बड़े बड़े, ज्ञात संवितरणों जैसे कि राजकोषीय घाटे के वित्तीयन के लिए संविदाकृत बांडों की एकमुश्त चुकौती और विशेष रूप से यदि बाजार में व्यवधान उत्पन्न नहीं हुआ है, बेंचमार्क बांडों के पहले कई सप्ताहों में धीरे-धीरे नकद शेषों को बनाए रखने की आवश्यकता है। तीसरे, जबकि सरकारी नकद शेषों के बर्हिवाह का अधिकांश हिस्सा अनियमित है, प्रत्यक्ष कर 'राजस्व और अन्य स्रोतों के माध्यम से अंतर्वाह स्वरूप में एकमुश्त और अनियमित हैं। रिज़र्व बैंक के पास सरकारी नकद शेषों का जमा होना वास्तव में प्रणाली से चलनिधि को वापस लेना है और उसका वही प्रभाव होता है जो मौद्रिक कड़ाई का होता है, अलबत्ता मौद्रिक प्राधिकारी का ऐसा करने का कोई इरादा नहीं होता है। इसी प्रकार, यदि केंद्रीय बैंक के पास रखे गए सरकार के नकद शेष घटते हैं तो प्रणाली में नकदी ड़ालना माना जाएगा, यह ऐसी स्थिति के बावजूद होगा जिसमें उदाहरण के लिए, मौद्रिक नीति को मौद्रिक चलनिधि के प्रति झुका हुआ माना जाएगा। इस प्रकार, अस्थिर सरकारी नकदी शेष मौद्रिक आधार में अप्रत्याशित विस्तार अथवा संकुचन का कारण हो सकते हैं और परिणामस्वरूप, मुद्रा आपूर्ति और चलनिधि मौद्रिक नीति के वर्तमान रूझान के साथ आवश्यक रूप से संबद्ध नहीं हो सकती है। सरकारी नकद शेषों के उतार-चढ़ाव के कारण मौद्रिक प्रबंधन का कार्य जटिल हो जाता है, अतएव प्रायः समंजनकारी उपायों की आंशिक रूप से अथवा पूरी तरह से आवश्यकता होती है, जिससे मौद्रिक नीति के उद्देश्य को बरकरार रखा जा सके[8]।

6.83 बैंकों द्वारा सक्रिय चलनिधि प्रबंध मुद्रा बाजार में गतिविधियों के स्वरूप-निर्धारण का दूसरा महत्वपूर्ण कारक है। नकदी के लिए भारी और अप्रत्याशित माँग जो बैंकों के नकदी प्रवाह में असंतुलन पैदा करती है, अक्सर मुद्रा बाजार में अत्यधिक अस्थिरता पैदा करती है और बैंक रिज़र्व बैंक की चलनिधि समायोजन सुविधा का सहारा लेने को उन्मुख होते हैं। इससे बाजार में चल-निधि बनाए रखने के भार में वृद्धि होती है और मुद्रा बाजार में स्थिरता लाने का भार रिज़र्व बैंक पर पड़ता है। अतः बैंकों द्वारा चल निधि प्रबंध की पूर्व तैयारी बाजार में चलनिधि प्रबंध के

[8] मोहन, राकेश (2007), ञ्भारत में मौद्रिक नीति की संप्रेषणीयताट भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन, अप्रैल

लिए रिज़र्व बैंक के प्रयास में योगदान करती है तथा मुद्रा बाजार में स्थिरता उपलब्ध कराती है।

6.84 रिज़र्व बैंक के सक्रिय चल निधि प्रबंध ने हाल की विगत अवधि में मुद्रा बाजार स्थितियों को स्थिरता प्रदान करने में सहायता की है। वित्तीय बाजार वर्ष 2006-07 की प्रथम छमाही के अधिकांश भाग के दौरान आसान चलनिधि स्थितियों से चल कर दूसरी छमाही में सरल और सख्त चलनिधि के मिश्रित स्वरूपों में पहुँच गए। ऐसी गतिविधियों के होते हुए भी चलनिधि समायोजन सुविधा और बाजार स्थिरीकरण योजना परिचालनों के साथ रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि प्रबंध परिचालन तथा बाजार स्थिरीकरण योजना सरलीकरण निर्गम, माँग मुद्रा दर अधिकांशतः रिपो - प्रत्यावर्तनीय रिपो दर निर्धारित सीमा (चार्ट VI.3) के भीतर बनाए रखने में सफल रहे। इस अवधि के दौरान, अन्य बातों के साथ-साथ, निर्धारित सीमा को भंग करना, सरकारी नकदी शेषों की अस्थिरता, अग्रिम कर बहिर्वाह तथा त्योहारों के मौसम के कारण मुद्रा माँग की अस्थिरता का परिणाम था।

6.85 जैसाकि बैंकिंग क्षेत्र सुधार के संबंध में समिति द्वारा सिफारिश की गई थी (अध्यक्ष : श्री एम.नरसिंहम; 1998), मांग/ सूचना मुद्रा बाजार को पूर्णतया अंतर-बैंक बाजार में परिवर्तित करने की प्रक्रिया अगस्त 2005 में पूरी कर ली गई। अब अनुसूचित वाणिज्य बैंक, सहकारी बैंक और प्राथमिक व्यापारी अपने द्वारा उधार ली गई और दी गई राशियों पर लगाई गई विवेकपूर्ण सीमाओं के अनुसार असंपार्श्विकीकृत मांग/ सूचना मुद्रा बाजार में भाग लेते हैं। ओवरनाइट बाजार के संपार्श्विकीकृत खंड में, पात्र गैर-बैंक इकाइयां भी भाग लेती है, असंपार्श्विकीकृत खंड में बैंकों तथा प्राथमिक व्यापारियों द्वारा ली गई और दी गई राशियों पर विवेकपूर्ण सीमाएं लागू करने से, मुद्रा बाजार में जोखिम काफी हद तक कम हो गए हैं।

6.86 मुद्रा बाजार में वर्ष 2004-05 से वित्तीय स्थिरता के दृष्टिकोण से एक महत्वपूर्ण गतिविधि रही है - मुद्रा बाजार गतिविधियों का असंपार्श्विकीकी मांग मुद्रा खंड से संपार्श्विकीकृत बाजार रिपो तथा सीबीएलओ की ओर वास्तविक रूप से बढ़ना (चार्ट VI.4)। इस गतिविधि की ओर जाने का परिणाम मुख्यतया मांग मुद्रा बाजार से गैर-बैंक सहभागियों को हटाना है। संपार्श्विकीकृत खंड में मात्रा में वृद्धि वित्तीय स्थिरता के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बाजार के सहभागियों के जोखिम को कम करता है।

विदेशी मुद्रा बाजार

6.87 1990 के दशक से पहले विदेशी मुद्रा बाजार की विशेषता कठोर विनियम, बाह्य लेनदेनों पर प्रतिबंध, प्रवेश पर प्रतिबंध, निम्न चलनिधि और उच्च लेनदेन लागत होती थी। फेरा, 1973 के अंतर्गत विदेशी मुद्रा लेनदेनों को कड़ाई से विनियमित और नियंत्रित किया जाता था। अगस्त 1994 में रुपए के सभी चालू खाता लेनदेनों पर पूर्णतः परिवर्तनीय कर दिए जाने से बैंकों की जोखिम सहन करने की क्षमता बढ़ गई और विदेशी मुद्रा व्यापार की मात्रा बढ़ने लग गई। इसे बाजार की रुकावटें हटाने और विदेशी मुद्रा बाजार को गहन करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार के

चार्ट VI.3: मांग दर, रिपो दर और रिवर्स रिपो दर

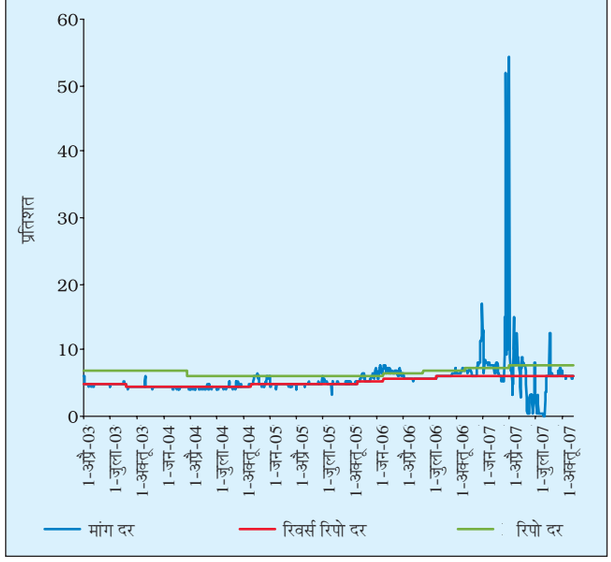

चार्ट VI.4: मुद्रा बाजार में गतिविधि (दैनिक औसत मात्रा)

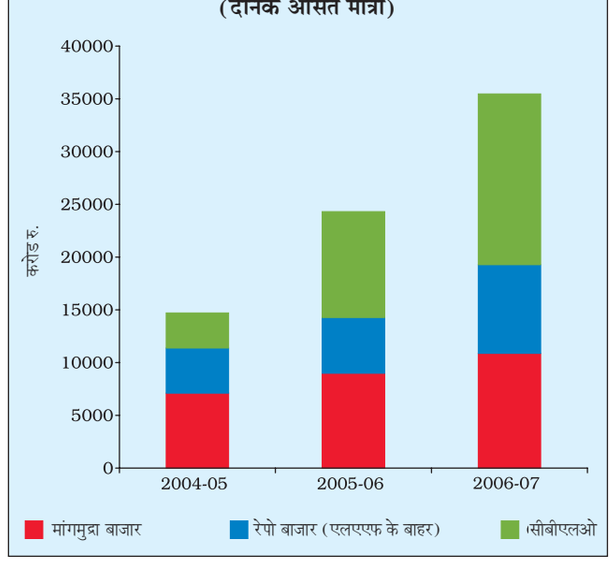

साथ मिलकर किए गए व्यापक सुधारों से भी सहायता मिली। सुधार का चरण सोढानी समिति (1994) से प्रारंभ हुआ जिसने 1995 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में विदेशी मुद्रा बाजार को मजबूत करने की दृष्टि से विनियमों को शिथिल करने की सिफारिश की थी। विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम (फेरा) के स्थान पर बाजार अनुकूल विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम (फेमा), 1999 आने से रिज़र्व बैंक ने विभिन्न प्रयोजनों के लिए विदेशी मुद्रा जारी करने हेतु प्राधिकृत व्यापारियों को अधिकार दिए। पूंजी खाता लेनदेन भी स्तरबद्ध तरीके से उदार किए गए।

6.88 विदेशी मुद्रा लेनदेन को सरल बनाने और विदेशी मुद्रा लेनदेन करने में व्यक्तियों और कंपनियों को अधिक लचीलापन प्रदान करने के लिए 2006-07 में अनेक उपाय किए गए जो अध्याय 2 (भाग 7) में दिए गए हैं। पिछले कुछ वर्षों में, विनिमय दर डायनैमिक्स के निर्धारण में पूंजीगत प्रवाह काफी महत्वपूर्ण हो गए हैं। इस अवधि में पूंजी प्रवाहों में बीच-बीच में उतार-चढ़ाव देखने में आए हैं जिसमें आवधिक बहुत अधिक वृद्धि और गिरावट हुई। तथापि, 2004-05 से निवल पूंजीगत प्रवाहों में काफी वृद्धि हुई है और चालू खाता घाटे से काफी अधिक रहे हैं।

6.89 अप्रतिबंधित पूंजी खाते के उदारीकरण से प्रतिकूल अंतरराष्ट्रीय अनुभव को देखते हुए, पूंजी खाते के उदारीकरण की भारतीय नीति धीरे-धीरे खोलने की रही है। पूंजी खाते का संरचनात्मक अंतरण नीतिगत ढांचे के अनुरूप है जो भुगतान संतुलन को स्थिरता प्रदान करता है। पूंजी खाते की सुवहनीयता को व्यापक रूप से सामान्य पूंजीगत प्रवाह की मात्रा के अनुरूप देखा जाता है[9]। तथापि, विदेशी पूंजी आवकों की व्यापक वृद्धि ने हाल में मौद्रिक प्रबंधन के कार्य को जटिल बना दिया जिससे रिज़र्व बैंक को मौद्रिक स्थिरता के बचाव में अवरुद्धता लेनदेन करने पड़े।

6.90 1990 के दशक में विदेशी मुद्रा बाजार कुल मिलाकर स्थिर रहा, विशेषकर 1998 के बाद। अस्थिरता की कुछ घटनाएं हुईं। तथापि, प्रभावी नीतिगत प्रतिक्रियाएँ बाजार में तेजी से व्यवस्थित स्थितियां लाने में सफल रहीं। कुछ अवसरों को छोड़कर, अमरीकी डालर की तुलना में भारतीय रुपये में बदलाव का सह-गुणांक, सीमित दायरे में रहा (चार्ट VI.5)। कुछ उतार-चढ़ाव को दिखलाते हुए, रुपया-डालर की विनियम दर का मानक विचलन 2005-06 के 0.79 से कुछ बढ़कर 2006-07 के दौरान

चार्ट VI.5: विदेशी मुद्रा बाजार में उतार-चढ़ाव - अमरीकी डालर की तुलना में रुपये की विनिमय दर

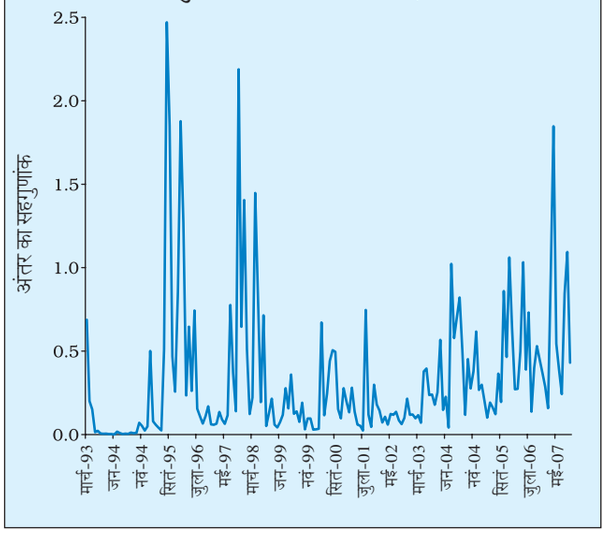

0.89 हो गया।

6.91 वर्ष 2006-07 के दौरान भारतीय रुपये में अमरीकी डालर की तुलना में प्रति अमरीकी डालर 43.14 रुपये और 46.97 रुपये के बीच दुतरफा उतार-चढ़ाव दिखाई दिया (चार्ट VI.6)। कच्चे तेल की उच्चतर कीमतों, शेयरों में भारी गिरावट, विदेशी संस्थागत निवेश बहिर्वाहों तथा मध्य एशियाई क्षेत्र में

चार्ट VI.6: अमरीकी डालर की तुलना में रुपये की विनियम दर

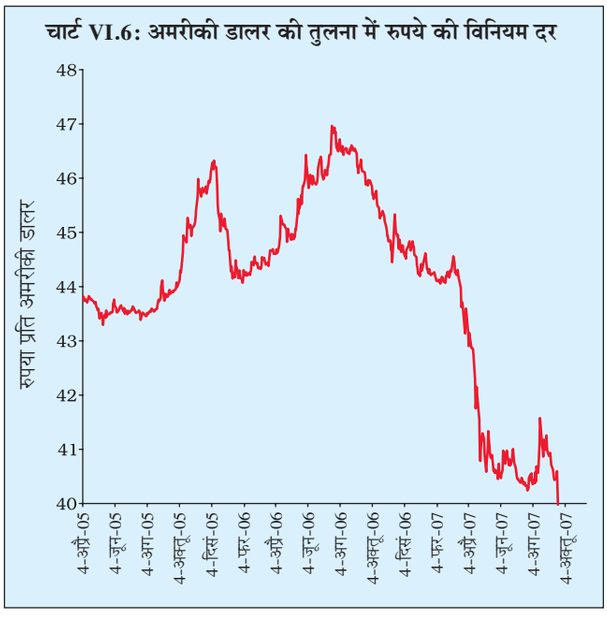

[9] मोहन राकेश (2005), वैश्विक व्यवस्था क्रम में भारतीय अर्थव्यवस्था; भारतीय रिज़र्व बैंक बुलेटिन अक्तूबर.

राजनीतिक जोखिमों के कारण रुपया 2006-07 की पहली तिमाही में गिरकर 19 जुलाई 2006 को 46.97 रुपये हो गया। उसके बाद नये एफआइआइ अंतर्वाहों, कच्चे तेल मूल्यों में कमी तथा अंतरराष्ट्रीय बाजार में कमजोर अमेरीकी डालर के कारण रुपया धीरे-धीरे मजबूत हुआ और सितंबर के मध्य में 46 रुपये प्रति डालर और नवंबर 2006 के पहले सप्ताह में 45 रुपये प्रति डालर हो गया। अंतरराष्ट्रीय साख निर्धारण एजेंसी एस एंड पी द्वारा 30 जनवरी 2007 को भारत की साख श्रेणी के निवेश में सर्वोत्तम श्रेणी निर्धारण के परिणामस्वरूप नये पूंजीगत अंतर्वाहों में मजबूती आई और मार्च 2007 के मध्य तक विनियम दर लगभग 44 रुपये प्रति अमरीकी डालर हो गयी और 30 मार्च 2007 को 43.60 रुपये प्रति अमरीकी डालर थी। वृद्धिशील अर्थव्यवस्था की बढ़ती निवेश मांग तथा बाह्य वाणिज्य उधार, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश और पोर्टफोलियो निवेश के कारण पूंजीगत प्रवाहों में वृद्धि से रुपये में काफी वृद्धि हुई। वार्षिक औसत आधार पर, अमेरिकी डालर की तुलना में रुपया 2.22 प्रतिशत मजबूत हुआ। पारस्परिक मुद्रा गतिविधियों को दर्शाते हुए, मार्च 2006 के अंत और मार्च 2007 के अंत के बीच पौंड स्टर्लिंग की तुलना में रुपये में 9.1 प्रतिशत और यूरो की तुलना में 6.8 प्रतिशत की गिरावट आयी लेकिन जापानी येन की तुलना में 2.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। चालू वर्ष के दौरान, मई 2007 के अंत तक रुपये में वृद्धि हुई परन्तु उसके बाद जून 2007 के अंतिम सप्ताह तक उसमें मूल्यह्रास हुआ। तथापि, 1 नवंबर 2007 को वह पुनः बढ़कर 39.31 रुपये पर पहुँच गया। भारतीय रिज़र्व बैंक की विनिमय दर नीति विनिमय दरों की सावधानीपूर्ण निगरानी तथा प्रबंधन संबंधी स्थूल सिद्धांतों के अनुसार जारी रही, जो बिना किसी निर्धारित लक्ष्य के या किसी पूर्व घोषित लक्ष्य या सीमा के थी जिसमें अत्यधिक अस्थिरता या सट्टेबाजी को सीमित करने के लिए जब भी आवश्यक हो, हस्तक्षेप करने की सक्षमता उपलब्ध थी।

6.92 2006-07 के दौरान, विदेशी मुद्रा बाजार के अंतर-बैंक तथा व्यापारी खंडों में पण्यावर्त बढ़ गया, जो भुगतान संतुलन के चालू और पूंजी खाता के संबंध में अंतर्निहित लेनेदनों में मजबूत वृद्धि दिखलाता है। जबकि, अंतर-बैंक पण्यावर्त अप्रैल 2006 में 17.7 बिलियन अमरीकी डालर के दैनिक औसत की तुलना में मार्च 2007 में बढ़कर 26 बिलियन अमरीकी डालर हो गया, दैनिक औसत व्यापार पण्यावर्त 6.5 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर 9.2 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। 2006-07 के दौरान

चार्ट VI.7: विदेशी मुद्रा बाजार में टर्नओवर
(दैनिक औसत)

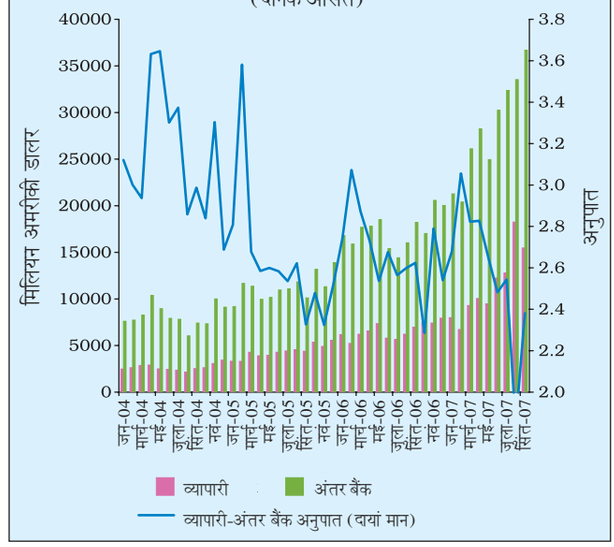

व्यापार पण्यावर्त (दैनिक औसत) में अंतर-बैंक पण्यावर्त का अनुपात 2.28 तथा 3.05 के बीच रहा (चार्ट VI.7)।

सरकारी प्रतिभूति बाजार

6.93 सरकारी प्रतिभूति बाजार वित्तीय बाजार का एक प्रमुख खंड है जिसमें ऋण जोखिम मुक्त अत्यधिक तरल वित्तीय लिखतें प्रदान की जाती हैं, जिनमें बाजार के सहभागी लेनदेन करने और अपनी पोजीशन को ठीक करने के अधिक इच्छुक होते हैं। एक जोखिम मुक्त बेंचमार्क प्रस्तुत करके, सरकारी प्रतिभूति बाजार अन्य वित्तीय बाजारों के विकास को भी सुविधाजनक बनाता है और वित्तीय बाजार के विभिन्न खंडों के समन्वयन के लिए एक माध्यम के रूप में कार्य करता है। सरकारी प्रतिभूति बाजार, जो बहुधा कई अर्थव्यवस्थाओं में समग्र ऋण बाजार का प्रमुख खंड होता है, मौद्रिक नीति संप्रेषण व्यवस्था में भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है[10]। इस प्रकार, सरकारी प्रतिभूति बाजार वित्तीय बाजार के अन्य खंडों में मूल्य पहचान क्रिया व्यवस्था की कुशलता को बढ़ाता है, जो वित्तीय स्थिरता की एक प्रमुख शर्त है।

6.94 केंद्रीय बैंक को, एक विकसित सरकारी प्रतिभूति बाजार से खुला बाजार परिचालन (रिपो सहित) जैसे मौद्रिक नीति के अप्रत्यक्ष या बाजार आधारित लिखतों का उपयोग करने की और अधिक स्वतंत्रता प्राप्त होती है। सरकार द्वारा अपनी निधियों की आवश्यकता के लिए बाजार का और अधिक सहारा लेने से पात्र

[10] भारतीय रिज़र्व बैंक (2007) मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट, 2005-06,www.org.in

संपार्श्विकीकृत प्रतिभूतियों में वृद्धि होती है, जिससे केंद्रीय बैंक अप्रत्यक्ष लिखतों के माध्यम से मौद्रिक नीति का संचालन कर सकता है। पात्र संपार्श्विक प्रतिभूतियों की बढ़ती मात्रा से कई विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों को मौद्रिक नीति के संचालन में, विशेषकर पूंजीगत प्रवाहों के प्रभावों को निष्क्रिय करने में, लचीलापन प्राप्त होता है।

6.95 चूंकि मौद्रिक नीति के परिचालनों के संचालन में सरकारी प्रतिभूति बाजार एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, इसलिए एक गहन, तरल और जीवंत सरकारी प्रतिभूति बाजार को विकसित करने में केंद्रीय बैंक बहुत रूचि दिखलाते हैं। भारत में, रिज़र्व बैंक ने निवेशक आधार को व्यापक बनाने; प्राथमिक निर्गमों में पारदर्शिता बढ़ाने, लिखतों के चयन में विस्तार, प्रमुख परिपक्वताओं में प्रतिभूतियों की बेंचमार्किंग तथा समेकन तथा यथोचित रक्षोपाय करने तथा मजबूत व्यापार तथा भुगतान संबंधी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए कई प्रकार की पहलें की है।

6.96 1990 के दशक के पूर्वार्द्ध में नीलामी आधारित सरकारी प्रतिभूतियां जारी करना सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास का एक प्रमुख उपाय था। गैर-बैंकिंग इकाइयों जैसे कि बीमा कंपनियों, म्युच्युअल फंड, सहकारी बैंक तथा अन्य गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की सहभागिता से निदेशक आधार और अधिक स्वैच्छिक और विविध हो गया है। सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास में प्राथमिक व्यापारी प्रणाली का विकास करना एक महत्वपूर्ण कदम है। बाजार के रुझान को देखते हुए, नवोन्मेषी विशेषताओं सहित नये लिखत प्रारंभ किए गए हैं जिनमें जीरो कूपन बांड तथा अस्थायी दर बांड शामिल हैं। प्रौद्योगिक गतिविधियों के कारण स्क्रीन आधारित छद्म व्यापार और रिपोर्टिंग प्लेटफार्म - एनडीएस-ओएम लागू हो पाया है। इसके अतिरिक्त, भारतीय समाशोधन निगम लि. प्रारंभ करने से सौदों का गारंटीकृत भुगतान सुनिश्चित हुआ है और इसलिए सरकारी प्रतिभूति बाजार को काफी स्थिरता प्राप्त हुई है। मुख्य रूप से पुनर्निर्गमों के द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के समेकन की रणनीति से प्रमुख प्रतिभूतियों में गति आयी है, जिससे बाजार बेंचमार्क उभरने में सुविधा हुई है।

6.97 1 अप्रैल 2006 से रिज़र्व बैंक पर सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम में अभिदान करने पर रोक लगा दी गई। इस प्रकार एफ आर बी एम के बाद के दौर में ऋण प्रबंधन को सुगम करना मुख्य मुद्दा था। अतः रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूति बाजार विकसित करने के लिए कुछ विशेष कदम उठाए। रिज़र्व बैंक ने अगस्त 2006 में 'जब जारी' सौदों की शुरुआत की ताकि प्रत्येक निर्गम के लिए वास्तविक वितरण अवधि को बढ़ाकर नीलाम किए गए शेयरों के कुशल वितरण को सुविधाजनक बनाया जा सके और बिना किसी व्यवधान के बड़े निर्गमों को अवशोषित करने के लिए बाजार को और अधिक समय मिल सके। फरवरी 2006 में पात्र सहभागियों के बीच सरकारी प्रतिभूतियों में 'मंदड़िया बिक्री' की अनुमति दी गई जिससे सहभागियों की ब्याज दर चक्र के बारे में संतुलित प्रतिक्रिया मिलने की आशा है। 31 जनवरी 2007 से 'मंदड़िया बिक्री' को पांच कार्य दिवस तक बढ़ाने से सरकारी प्रतिभूतियों में सौदा सहज होने की आशा है। रिज़र्व बैंक ने एफ आर बी एम अधिनियम के बाद के दौर में सरकार का बाजार उधार कार्यक्रम सुगमतापूर्वक संचालित करने के लिए प्राथमिक व्यापारी प्रणाली में उपयुक्त सुधार किए।

6.98 एनडीएस-ओएम ट्रेडिंग प्लेटफार्म, जो शुरू में केवल केंद्र और राज्य सरकार की दिनांकित प्रतिभूतियों में ट्रेडिंग को समायोजित करता है, खजाना बिलों को हैंडल करने के लिए जुलाई 2006 में अपडेट किया गया। एनडीएस-ओएम की सदस्यता 25 मई 2007 को उन अर्हताप्राप्त कंपनियों के लिए खोल दी गई जो एनडीएस सदस्यों जैसे जमा लेनेवाली एनबीएफसी, भविष्य निधियों, पेंशन निधियों, पारस्परिक निधियों, बीमा कंपनियों, सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और न्यासों के साथ सरकारी प्रतिभूति खाते रखती हैं। वार्षिक नीति वक्तव्य, 2007 की अर्धवार्षिक समीक्षा में यह प्रस्तावित किया गया कि एनडीएसओएम तक पहुँच की सुविधा प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण जमा न लेने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों को दी जाए। केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के समेकन की दृष्टि से, सक्रिय समेकन की एक योजना शुरू की गई और केंद्र सरकार द्वारा अनुमोदित की गई। योजना के अंतर्गत प्रतिभूतियों की पुनर्खरीद की वास्तविक कार्रवाई 2007-08 के दौरान किए जाने की आशा है।

6.99 2006-07 के दौरान, निरंतर भारी पूंजी अन्तर्वाह को देखते हुए, चलनिधि प्रबंधन ने बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अंतर्गत सरकारी प्रतिभूतियों के निर्गम का सहारा लिया जिससे एमएसएस के अंतर्गत शेष अप्रैल 2006 के अंत के 24,276 करोड़ रुपए से बढ़कर मार्च 2007 के अंत में 62,974 करोड़ रुपए हो गए। 2004 में एमएसएस की शुरुआत से, जिसे यथार्थ बाजार आधारित स्थिरीकरण योजना के रूप में देखा जा सकता है, रिज़र्व बैंक को मौद्रिक और चलनिधि परिचालनों में और अधिक लोच प्राप्त हुई है। जबकि एमएसएस के अंतर्गत प्रतिभूतियों के निर्गम ने सरकारी प्रतिभूतियों के स्टॉक और चलनिधि प्रबंधन को आसान बनाने के अलावा, सरकारी प्रतिभूति बाजार में चलनिधि को बढ़ाने में योगदान किया, इसने एमएसएस प्रतिभूतियों पर ब्याज व्यय के अर्थ में सरकार पर बोझ को बढ़ाया। एफआरबीएम अधिनियम के अंतर्गत सकल राजकोषीय उधार और राजस्व घाटे में लक्षित कमी की दृष्टि से यह

और अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।

6.100 सरकारी प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाजार में पण्यावर्त ने ब्याज दर चक्र के प्रति असंगत प्रतिक्रिया दिखाई अर्थात् ब्याज दरों में गिरावट के समय बाजार तरल और सक्रिय हो गया लेकिन ब्याज दर बढ़ने पर असक्रिय हो गया। परिणामस्वरूप, ब्याज दरों के कम हो जाने के कारण 2001-02 और 2004-05 के बीच जो टर्नओवर जीडीपी के प्रतिशत के रूप में बढ़ गया था, वह ब्याज दर बढ़ने पर काफी कम हो गया (सारणी VI.8)।

6.101 निवेशकों की अल्पकालिक प्रतिभूतियों की पसंद और विद्यमान समष्टि आर्थिक परिस्थितियों तथा बाद में अपेक्षाकृत कम अवधि की प्रतिभूतियों के निर्गम के कारण 1990 के दशक में दीर्घावधिक आय वक्र विकसित नहीं हो पाया। मुद्रास्फीतिकारी परिस्थितियों में नरमी को ध्यान में रखते हुए सरकार ने प्राथमिक निर्गमों की परिपक्वता अवधि बढ़ा दी । इसके परिणामस्वरूप 2002-03 से 30 वर्षीय अवधि के लिए आय वक्र विकसित हुआ है। नीति दरों में परिवर्तन के प्रति अल्पकालिक दरों की प्रतिक्रिया दीर्घावधिक दरों की अपेक्षा तेज तथा अधिक मुखर रही है जो नीति दरों के परिवर्तन के अल्पकालिक प्रभावों की सूचक है (चार्ट VI.8)।

6.102 वर्ष 2006-07 के दौरान सरकारी प्रतिभूति बाजार में होने वाली आय में उतार-चढ़ाव देशी गतिविधियों और साथ ही वैश्विक घटनाओं की सूचक रही है। वर्ष 2006-07 के दौरान

सारणी VI.8 केंद्र सरकारकी प्रतिभूतियों में गौण बाजार के लेनदेन

(राशि करोड़ रुपए)

वर्ष	एक दिवसीय	रेपो	कुल	जीडीपी के प्रतिशत के रूप में स्तंभ 4	आय * (प्रतिशत)
1	2	3	4	5	6
1999-2000	4,56,493	82,739	5,39,232	27.6	11.70
2000-01	5,72,145	1,25,976	6,98,121	33.2	10.95
2001-02	12,11,941	3,61,932	15,73,873	69.0	9.44
2002-03	13,78,160	5,63,515	19,41,675	79.0	7.34
2003-04	16,83,711	9,55,533	26,39,244	95.4	5.71
2004-05	11,60,632	15,62,990	27,23,622	87.3	6.11
2005-06	8,81,632	16,98,770	25,80,401	72.3	7.34
2006-07	3,34,901	11,31,461	14,66,362	35.5	7.89
2007-08 (अप्रैल-अक्तू.)	7,23,717	19,38,492	26,62,209	57.5	8.19

* : केंद्र सरकार की प्राथमिक प्रतिभूतियों पर भारांकित औसत आय।
टिप्पणी : आंकड़े केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों से संबंधित हैं, टी-बिल छोड़कर।

चार्ट VI.8: सरकारी प्रतिभूतियों का आय वक्र

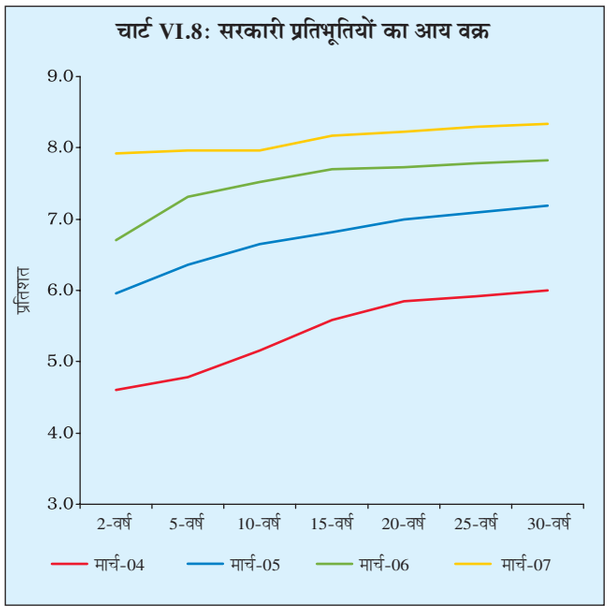

अनुषंगी बाजार में होनेवाली आय, अनवरत देशी ऋण मांग तथा अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के बढ़ते मूल्यों के कारण पैदा होने वाले मुद्रास्फीतिकारी दबावों के कारण में और बढ़ गई। वैश्विक स्तर पर मौद्रिक नीति में आई कठोरता से भी आय में वृद्धि हुई जो भारतीय वित्तीय बाजार के वैश्विक बाजारों के साथ एकीकरण का द्योतक है। दिसम्बर 2006 के बाद 10 वर्षीय सरकारी प्रतिभूतियों पर होने वाली आय में वृद्धि, अग्रिम कर भुगतानों, अधिक मुद्रास्फीति तथा सीआरआर बढ़ाये जाने के कारण देशी चलनिधि में कमी की सूचक है। आय 14 फरवरी 2007 को सीआरआर में बढ़ोत्तरी के कारण 17 आधार अंकों की तेज वृद्धि के साथ 8.08 प्रतिशत तक पहुँच गयी जो 21 मार्च 2007 को बढ़कर 8.10 प्रतिशत की ऊँचाई पर पहुँच गई। 10 वर्षीय आय 31 मार्च 2007 को 7.97 प्रतिशत थी जो 31 मार्च 2006 के स्तर से 45 आधार अंक अधिक थी। वर्ष 2007-08 के दौरान आय मई 2007 के अंत तक 7.97 प्रतिशत तथा 8.19 प्रतिशत की सीमा के भीतर बनी रही और यह गैर-अनुसूचित नीलामियों की घोषणा तथा विश्व स्तर पर ब्याज दरों के सख्त होने के कारण जून 2007 के मध्य में 8.30 प्रतिशत के शिखर पर पहुँच गई। इसके बाद आय में मंदी का दौर शुरू हुआ और यह नवंबर 2007 के प्रथम सप्ताह के अंत तक 7.85 प्रतिशत से 8.01 प्रतिशत के बीच गतिशील बनी रही जो आसान चलनिधि की परिस्थितियों के अनवरत प्रभावी रहने को प्रतिबिंबित करती है। 10 वर्षीय आय 08 नवंबर 2007 को 7.96 प्रतिशत पर बंद हुई जो 08 नवंबर 2006 के स्तर से 37 आधार अंक अधिक थी (चार्ट VI.9)।

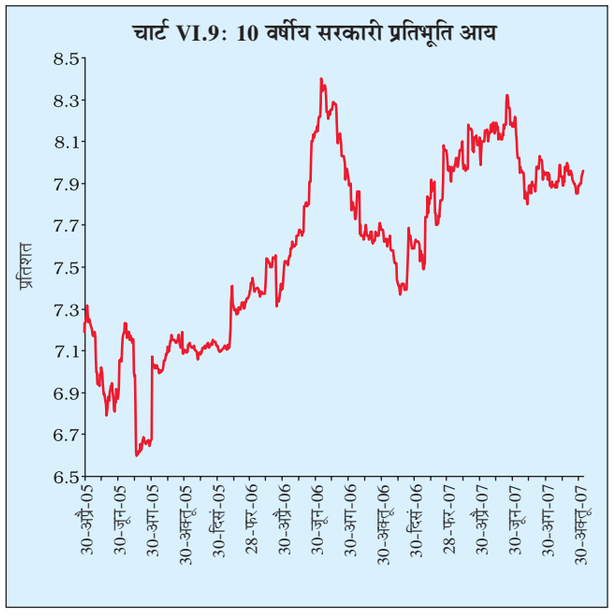

पूंजी बाजार

6.103 पूंजी बाजार चलनिधि तथा निवेश संबंधी लिखत प्रदान करने के मामले में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। तरल कंपनी बांड बाजार आर्थिक विकास को सहायता पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है क्योंकि यह दीर्घावधि पूंजी निवेश और आस्ति निर्माण के लिए कंपनी क्षेत्र की आवश्यकता पूरी करने में बैंकिंग प्रणाली को सहायता पहुंचाता है। देशी पूंजी बाजार मुद्रा संबंधी असमानताओं में कमी लाकर तथा ऋण की अवधि में वृद्धि करके निजी कंपनी ऋण बाजार वित्तीय स्थिरता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है[11]। ऐसे बाजार, बाजार द्वारा निर्धारित ब्याज दर विकसित करके, जो विभिन्न परिपक्वताओं पर निधियों की अवसरगत लागत के सूचक हैं आर्थिक सक्षमता को प्रोत्साहन देते हैं। जिन अर्थव्यवस्थाओं में सुविकसित पूंजी ऋण बाजारों की कमी होती है उनमें दीर्घावधिक ब्याज दरें प्रतिस्पर्धात्मक आधार पर निर्धारित नहीं की जा सकतीं और इस प्रकार ये निधियों की सही लागत का सूचक नहीं हो सकतीं । इसके चलते बैंकों के लिए दीर्घावधिक ऋणों का मूल्य निर्धारित करना कठिन हो जाता है तथा उधारकर्ता उधार लेने की लागत का सही निर्धारण करने के लिए बाजार की एक मूल दर की कमी महसूस करते हैं। जहां स्थानीय मुद्रा में दीर्घावधिक ऋण संविदाएं निष्पादित करने के लिए बाजार विकसित नहीं हो पाया है, वहाँ उधारकर्ताओं द्वारा जोखिमपूर्ण वित्तपोषण का निर्णय लिए जाने की संभावना रहती है जिनके चलते तुलनपत्र संबंधी जोखिम पैदा होते हैं तथा चूक संबंधी जोखिमों में वृद्धि होती है।

6.104 ऋण संस्कृति और बाजार अनुशासन के पोषण के लिए निजी कंपनी बांड बाजार महत्वपूर्ण है। सुव्यवस्थित बांड बाजार की मौजूदगी से ऋण जोखिमों का दक्ष मूल्यन हो सकता है क्योंकि बाँड बाजार के सभी सहभागियों की अपेक्षाएं बाँड मूल्य में समाहित होती हैं। विकसित देशी पूंजी बाजार जोखिम के अभाव में निवेशों के निधीयन के लिए ऐसे विदेशी मुद्रा ऋणों का निर्गम जरूरी हो सकता है जिनके चलते स्थानीय मुद्रा संबंधी आय होती है जिसके परिणामस्वरूप मुद्रा संबंधी असमानताएं भी पैदा होती हैं । विनिमय दर में परिवर्तन के कारण तुलनपत्र तथा उधारकर्ता के ऋण संबंधी भुगतानों के लिए भी जोखिम पैदा होता है।

6.105 यद्यपि भारत में पूंजी बाजार लंबी अवधि में विकसित हुए है, लेकिन 1990 के दशक के प्रारंभ से सरकार सेबी द्वारा की गई विभिन्न पहलों के बाद ही इसमें उल्लेखनीय गति आई है। बाजार गतिविधियों में, जोकि 1997-98 और 2003-04 के बीच मंद रहीं, काफी तेजी आई है जो बाजार विकसित करने और निवेशक का विश्वास पुन: बहाल करने के लिए शुरू किए गए उपायों की सार्थकता को दर्शाती हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था द्वारा प्रारंभ मजबूत समष्टि आर्थिक सिद्धांतों और उच्चतर विकास दर पथ ने भी प्राथमिक पूंजी बाजार से संसाधन जुटाने में जबर्दस्त योगदान दिया है (चार्ट VI.10)।

6.106 1990 के दशक की दूसरी छमाही की शुरुआत में भारतीय कंपनी क्षेत्र द्वारा निवेश की वित्तपोषण प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। कंपनियां अब निधि के आंतरिक स्रोतों पर काफी भरोसा करने लगी है जिसने 1990-91 से 1994-95 के दौरान 29.9 प्रतिशत की तुलना में 2000-01 से 2004-05 के दौरान कुल निधियों के 60.7 प्रतिशत का निर्माण किया। परिणामस्वरूप, इस अवधि में ऋण-ईक्विटी अनुपात में तेज गिरावट आई। बढ़े हुए निवेश कार्यकलाप तथा बाह्य स्रोतों पर कंपनियों की निर्भरता के कारण, 2005-06 में ऋण और ईक्विटी दोनों में वृद्धि हुई। फलस्वरूप ऋण-ईक्विटी अनुपात में कुछ वृद्धि हुई (सारणी VI.9)। तुलन पत्र की डीलीवरेजिंग ने कंपनी क्षेत्र को अपनी लाभप्रदता सुधारने में महत्वपूर्ण रूप से सहायता की है जिससे आघात सहने के उनके सामर्थ्य में सुधार हुआ है।

[11] बीआइएस (2007), 'फाइनेंशियल स्टेबिलिटी एण्ड लोकल करेंसी बांड मार्केट्स', वैश्विक वित्तीय प्रणाली पर गठित समिति पेपर सं.28, www.bis.org

चार्ट VI.10: प्राथमिक पूंजी बाजार से संसाधन जुटाना

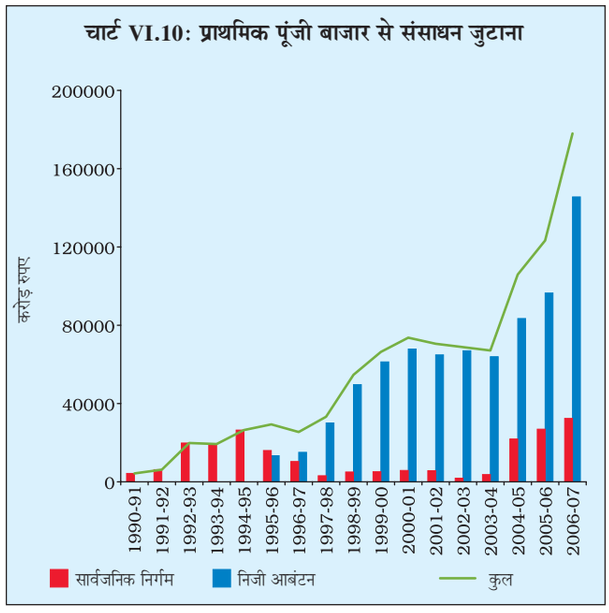

6.107 म्यूचुअल फंड ने पूंजी बाजार के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पिछले वर्षों में ईक्विटी बाजार में निवेशक की बढ़ती रुचि म्यूचुअल फंडों द्वारा जुटाए गए संसाधनों से भी आंकी जा सकती है। म्यूचुअल फंड द्वारा जुटाई गई निवल निधि (मोचन घटाकर) 2005-06 के दौरान 52,780 करोड़ रुपए की तुलना में 2006-07 के दौरान तेजी से बढ़कर 93,985 करोड़ रुपए हो गई और यह मुख्यतः ऋण उन्मुख योजनाओं के तहत जुटाए गए संसाधनों के कारण हुआ,जो वर्ष के दौरान लगभग चौगुनी हो गई। कम अवधि के लिए न्यूनतम जोखिम के साथ अधिशेष निधि को निवेश करने के प्रयोजन से ऐसी योजनाओं को प्राथमिकता दी जाती है। ईक्विटी उन्मुख योजनाओं के तहत म्यूचुअल फंडों द्वारा निवल संसाधन जुटाने में 2006-07 के दौरान गिरावट आई जो विशेष रूप से शेयर बाजार की रिकार्ड ऊँचाई को देखते हुए निवेशकों के बीच जोखिम से बचने की प्रवृत्ति को दर्शाता है (सारणी VI.10)।

6.108 5 वर्षीय एएए रेटेड कंपनी प्रतिभूति और जोखिम मुक्त सरकारी प्रतिभूति के बीच प्रतिफल-अंतर 2006-07 के दौरान मोटे तौर पर अपरिवर्तित रहा। मार्च 2007 के अंत और जून 2007 के अंत के बीच प्रतिफल-अंतर ज्यादा हो गया क्योंकि 5 वर्षीय प्रतिफल की नरमी कंपनी बांड में व्याप्त नहीं हो सकी। 10 वर्षीय सरकारी प्रतिभूति और एएए रेटेड कंपनी बांडों के बीच भी कमोबेश यही प्रवृत्ति देखी गई। (चार्ट VI.11)

सारणी VI.9 भारतीय कंपनियों के लिए निधियों के स्रोतों का पैटर्न

(कुल से प्रतिशत)

मद	1985-86 से 1989-90	1990-91 से 1994-95	1995-96 से 1999-2000	2000-01 से 2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6
1. आंतरिक स्रोत	31.9	29.9	37.1	60.7	43.6
2. बाह्य स्रोत	68.1	70.1	62.9	39.3	56.4
जिसमें से :					
क) ईक्विटी पूंजी	7.2	18.8	13.0	9.9	17.0
ख) उधार राशियां	37.9	32.7	35.9	11.5	24.4
जिसमें से :					
(i) डिबेंचर	11.0	7.1	5.6	-1.3	-2.7
(ii) बैंकों से	13.6	8.2	12.3	18.4	23.8
(iii) वित्तीय संस्थाओं से	8.7	10.3	9.0	-1.8	-2.4
ग) व्यापार बकाया और अन्य चालू देयताएं	22.8	18.4	13.7	17.3	14.7
कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
ज्ञापन:					
(i) पूंजी बाजार संबंधी लिखतों का हिस्सा (डिबेंचर और ईक्विटी पूंजी)	18.2	26.0	18.6	8.6	14.3
(ii) वित्तीय मध्यस्थों का हिस्सा (बैंकों और वित्तीय संस्थाओं से उधार)	22.2	18.3	21.3	16.6	21.4
(iii) ऋण-ईक्विटी अनुपात	88.4	85.5	65.2	61.6	43.0

टिप्पणी: आंकड़े गैर सरकारी और वित्तेतर पब्लिक लिमिटेड कंपनियों के नमूने से संबंधित हैं।
स्रोत: 'पब्लिक लिमिटेड कंपनियों के वित्त' विषय पर लेख, आरबीआइ बुलेटिन (विभिन्न अंक)

सारणी VI.10: म्यूचुअल फंडों द्वारा जुटाई गई निधियां - योजनाओं के प्रकार

(करोड़ रुपये)

योजना	2005-06				2006-07			
	योजनाओं की संख्या	सकल संग्रहण	निवल संग्रहण	निवल आस्तियां*	योजनाओं की संख्या	सकल संग्रहण	निवल संग्रहण	निवल आस्तियां*
1	2	3	4	5	6	7	8	9
क. आय/ऋण उन्मुख योजनाएं	**325**	**10,08,129**	**16,621**	**1,24,913**	**450**	**18,39,668**	**64,068**	**2,27,618**
(i) चलनिधि -मुद्रा बाजार	45	8,36,859	4,205	61,500	55	16,26,790	4,985	1,00,911
(ii) श्रेष्ठ प्रतिभूति	29	2,479	-1,560	3,135	28	1,853	-964	1,999
(iii) ऋण (निश्चित प्रतिलाभ के अलावा)	251	1,68,791	13,977	60,278	367	2,11,026	60,046	1,24,708
ख.संवृद्धि/ईक्विटी उन्मुख योजनाएं	**231**	**86,014**	**35,231**	**99,456**	**267**	**94,351**	**28,206**	**1,22,379**
(i) ईएलएसएस	37	3,935	3,592	6,589	40	4,669	4,453	9,600
(ii) अन्य	194	82,079	31,639	92,867	227	89,683	23,753	1,12,279
ग. संतुलित योजनाएं	**36**	**4,006**	**927**	**7,493**	**38**	**4,473**	**1,710**	**9,004**
घ. निधि योजनाओं की निधि	**13**	**845**	**-241**	**1,012**	**33**	**2,854**	**1,164**	**2,253**
कुल	**592**	**10,98,149**	**52,780**	**2,31,862**	**755**	**19,38,493**	**93,985**	**3,26,292**

* : मार्च के अंत की स्थिति। ईएलएसएस : ईक्विटी संबद्ध बचत योजना।
स्रोत: भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड ।

6.109 2006-07 में घरेलू अनुषंगी बाजारों में लगातार उछाल देखा गया जो पहली और चौथी तिमाही के दौरान गिरावट के साथ छितर गया (चार्ट VI.12)। वित्तीय वर्ष 2006-07 में बाजार तेजड़िया रुख के साथ शुरू हुए, लेकिन यह रुख कायम नहीं रह सका क्योंकि वैश्विक वृद्धि में गिरावट, वैश्विक मुद्रास्फीति में वृद्धि, उच्चतर अंतरराष्ट्रीय ब्याज दरों, कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि, अप धातुओं की कीमतों में कमी और विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा भारी बिकवाली संबंधी चिंताओं के चलते अधिक जोखिम निवारण के वैश्विक संकेतों के कारण 11 मई-14 जून 2006 के दौरान बाजारों में तेज गिरावट आई। 22 मई 2006 को घरेलू शेयर बाजार में फिर ऐतिहासिक गिरावट तब देखी गई जब दूसरी बार सर्किट ब्रेकर का प्रयोग किया गया। 14 जून 2006 को बीएसई सेन्सेक्स गिरकर

चार्ट VI.11: सरकारी प्रतिभूति और कंपनी बांड पर आय

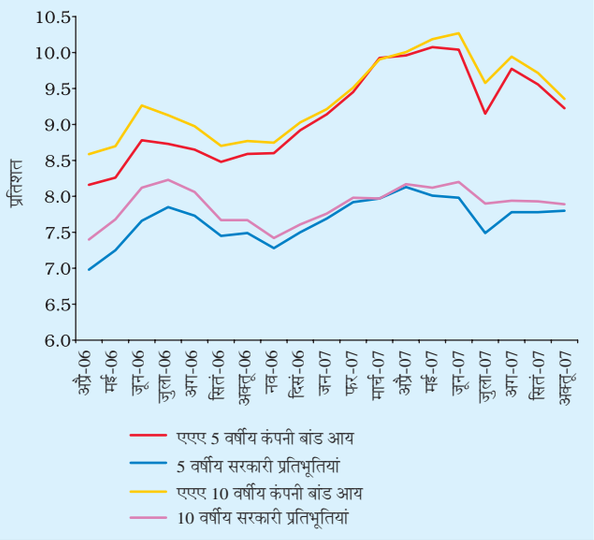

चार्ट VI.12: शेयर बाजार सूचकांकों में उतार-चढ़ाव

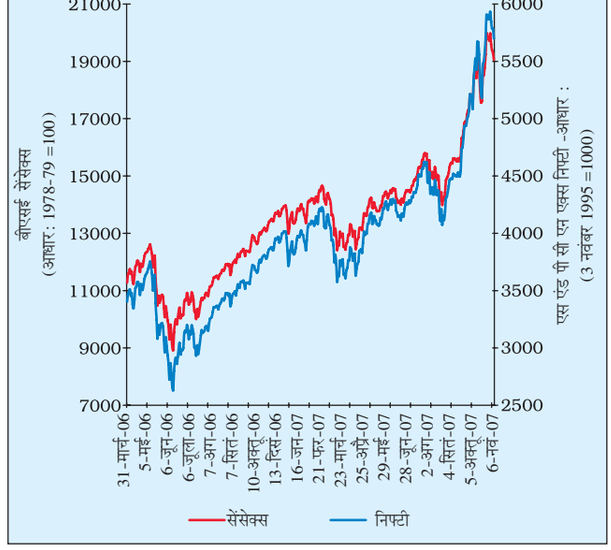

8,929 हो गया और इसने 10 मई 2006 के उस समय के सर्वाधिक ऊंचे 12,612 अंक की तुलना में 29.2 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की। तथापि, आगामी महीनों में शेयर बाजारों ने इस क्षति को घटा लिया जो विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा नई खरीद, अप धातुओं के मूल्यों में सुधार और सतत मजबूत समष्टि आर्थिक मौलिक तत्वों और कंपनी आय के बीच कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमत में नरमी को दर्शाता है। 8 फरवरी 2007 को बीएसई सेंसेक्स अब तक के सर्वाधिक 14,652 अंक तक पहुंच गया। हालांकि इसके बाद बढ़ती घरेलू मुद्रास्फीति की चिंताओं और अमेरिकी सब प्राइम बंधक उद्योग की समस्याओं के कारण अंतरराष्ट्रीय ईक्विटी बाजार में घबराहट के कारण गिरावट देखी गई । इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप मार्च 2007 अंत में बीएसई सेंसेक्स 13,072 पर बंद हुआ। लेकिन फिर भी मार्च 2006 अंत के अपने 11,280 अंक के स्तर से यह 15.9 प्रतिशत ऊंचा था।

6.110 2007-08 की अपनी ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति को बरकरार रखते हुए बीएसई सेंसेक्स अब तक के अपने सर्वोच्च स्तर 19,976 अंक पर 2 नवंबर 2007 को बंद हुआ अर्थात् मार्च 2007 के अंत की तुलना में 52.82 प्रतिशत की अधिक वृद्धि हुई। 2 नवंबर 2007 को एस एण्ड पी सीएनएक्स निफ्टी भी 5,932 के रिकार्ड ऊंचे स्तर पर पहुंच गया। विदेशी संस्थागत निवेशकों से चलनिधि समर्थन, सुदृढ़ जीडीपी वृद्धि, मजबूत कंपनी लाभप्रदता, वार्षिक देशी मुद्रास्फीति दर में गिरावट, प्रमुख अंतरराष्ट्रीय इक्विटी बाजारों में ऊपर की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति तथा धातुओं के मूल्यों में वृद्धि ने बाज़ार की भावनाओं में उत्साह बनाए रखा। तथापि, 2 नवंबर 2007 के बाद अमरीका और यूरोप में सब-प्राइम क्षेत्र की हानियों और क्रेडिट संकट संबंधी फिर से नई चिंताओं और प्रमुख करेंसियों की तुलना में अमरीकी डालर के मूल्य में गिरावट के चलते प्रमुख अंतरराष्ट्रीय इक्विटी बाजारों में मुख्यतः अधोमुखी प्रवृत्ति के कारण देशी शेयर बाजारों में कुछ गिरावट देखी गई। रिकार्ड ऊंचे स्तर तक कच्चे तेल के अंतरराष्ट्रीय मूल्यों में वृद्धि, भारतीय इक्विटी बाजार में विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा निवल बिकवाली, अमरीकी डालर की तुलना में रुपए का बढ़ना, धातुओं के वैश्विक मूल्यों में गिरावट तथा अन्य क्षेत्रों में गिरावट एवं स्टॉक विशिष्ट खबरों ने भी बाजार की भावनाओं में नरमी ला दी।

6.111 शेयर बाजार में अस्थिरता, कुछ अस्थिर गतिविधियों के प्रकरणों को छोड़कर एक सुविधाजनक स्तर पर बनी रही। (चार्ट VI.13)

6.112 भारत में कंपनी ऋण बाजार अभी भी विकास की प्रक्रिया से गुजर रहा है। घरेलू कंपनी बांड बाजार के विकास की दृष्टि से समिति (अध्यक्ष : आर.एच. पाटिल), ने अपनी रिपोर्ट दिसंबर 2005 में प्रस्तुत करते हुए अनेक सिफारिशें की हैं। सरकार, सेबी और

चार्ट VI.13: बीएसई सेंसेक्स के तिमाही परिवर्तन गुणांक

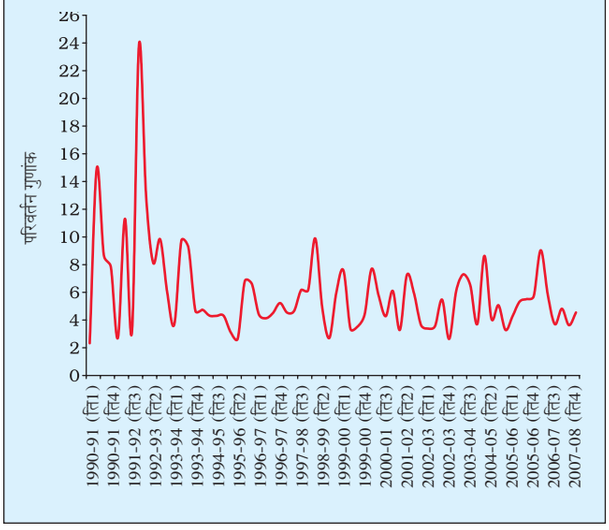

भारतीय रिज़र्व बैंक इन सिफारिशों पर कार्य कर रहे हैं। इसके एक भाग के रूप में, कंपनी बांड के लिए पारदर्शिता और सूचना प्रसार में सुधार लाने के लिए राष्ट्र-स्तरीय शेयर बाजारों ने रिपोर्टिंग प्लेटफार्म बनाया है। ओटीसी ट्रेड्स के लिए संस्थाओं से अपेक्षित है कि वे निर्धारित आय मुद्रा बाजार व्युत्पन्नी संघ (फिम्मडा) को रिपोर्ट करें। बाद में, राष्ट्र-स्तरीय दो शेयर बाजारों (बीएसई और एनएसई) ने कंपनी बांडों के लिए इलेक्ट्रानिक प्लेटफार्म बनाया जो अंततः व्यवस्था संतुलन प्रणाली (ऑर्डर मैचिंग सिस्टम) में रूपांतरित हो जाएगा। सेबी भी कंपनी बाँडों के लिए प्राथमिक निर्गम क्रियाविधि को उदार और सुगम बनाने के लिए कार्य कर रही है। सेबी ने बाजार सहभागियों के लिए यह अनिवार्य /अधिदेशात्मक कर दिया है कि वे कुल मिलाकर 1 लाख रुपए या अधिक के सभी कंपनी बांड के सौदों की रिपोर्ट सौदा समाप्ति से 30 मिनट के भीतर बीएसई / एनएसई को करें।

5. भुगतान और निपटान प्रणाली

6.113 भुगतान और निपटान प्रणाली का सुगमतापूर्वक कार्य करना अर्थव्यवस्था में वित्तीय प्रणाली के सुगमतापूर्वक कार्य करने के लिए महत्वपूर्ण है। कुछ वर्षों से प्रौद्योगिकीय गतिविधियों द्वारा वर्तमान भुगतान प्रणाली में आई तेज गति दर्शाती है कि इनके कार्यकलापों से जुड़ी कोई भी जोखिम, प्रणालियों के आपस में जुड़े होने के कारण विश्व के शेष भागों में भी भेजी जा सकती है।

6.114 पूरे विश्व में केंद्रीय बैंकों पर एक मजबूत और दक्ष भुगतान एवं निपटान प्रणाली स्थापित करने की जवाबदेही है। भारत में, रिज़र्व बैंक ने देश में भुगतान और निपटान प्रणाली की सुरक्षा और मजबूती

सुनिश्चित करने के लिए कई पहलें की हैं। रिज़र्व बैंक के केंद्रीय बोर्ड की एक समिति के रूप में मार्च 2005 में गठित भुगतान और निपटान प्रणाली विनियमन और पर्यवेक्षण बोर्ड (बीपीएसएस) देश में भुगतान और निपटान प्रणाली के सुचारू रूप से कार्य करने और इसका विकास करने के प्रति जवाबदेह है। यह भुगतान प्रणाली के परिचालन हेतु निर्देश जारी करता है, मानक तय करता है और प्रत्येक प्रणाली के लिए सदस्यता मानदंड का पुनरीक्षण करता है।

6.115 एक मजबूत विधिक ढांचा भुगतान और निपटान प्रणाली के सुचारू रूप से कार्य करने का आधार है। वर्तमान में, रिज़र्व बैंक के पास ऐसा कोई स्पष्ट विधिक आदेश नहीं है जिससे वह देश में भुगतान और निपटान प्रणाली का निरीक्षण कर सके। ऐसी शक्ति वर्तमान कानूनों उदाहरणार्थ, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 और बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 से ली गई है। एक कानून के रूप में भुगतान और निपटान प्रणाली विधेयक, 2006 के अधिनियमन के पश्चात रिज़र्व बैंक के पास सभी भुगतान और निपटान प्रणालियों को नियंत्रित और पर्यवेक्षण करने का अधिकार होगा।

6.116 भारी मूल्य और खुदरा भुगतान दोनों में भुगतान और निपटान प्रणालियों की क्षमता में सुधार के लिए 2006-07 के दौरान रिज़र्व बैंक ने कई प्रयास शुरू किए हैं। खुदरा और भारी मूल्य के लिए केंद्रो / शाखाओं की और संख्या शामिल करने के लिए एनईएफटी और आरटीजीएस का विस्तार इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम रहा है। खुदरा भुगतान प्रणालियों में पेपर आधारित भुगतान का स्वरूप अभी भी भुगतान का प्रचलित स्वरूप है। चेकों की भारी मात्रा की दृष्टि से जिन्हें वर्तमान में मैन्युअली व्यवस्थित किया जाता है, यह आवश्यकता महसूस की गई की उन समाशोधन गृहों में निपटान परिचालनों को कंप्यूटरीकृत किया जाए जहाँ पर मैग्नेटिक इंक कैरेक्टर रिकॉगनीशन चेक प्रोसेसिंग सेंटर (एमआइसीआर सीपीसी) एक व्यवहार्य विकल्प नहीं है। उन केंद्रों में समाशोधन परिचालनों के कंप्यूटरीकरण के लिए एक योजना तैयार की गई जहाँ 30 से अधिक बैंक (59 केंद्रों के अलावा जहां एमआइसीआर सीपीसी स्थापित किए गए हैं)। पहले चरण में मैग्नेटिक मिडिया आधारित समाशोधन प्रणाली (एमएमबीसीएस) का उपयोग कर रहे हैं। इसे प्राप्त करने पर 15 बैंकों से अधिक संख्या वाले केंद्रों की पहचान कंप्यूटरीकरण के लिए की गई। भुगतान प्रणाली की क्षमता में सुधार जैसाकि अध्याय 2 (खंड 9) में वर्णित है, चेक ट्रंकेशन प्रणाली (सीटीएस) भी शुरू की गई है।

6.117 बैंकिंग लेन-देन इलेक्ट्रॉनिकीकरण के प्रति निरंतर प्रयासों के परिणामस्वरूप कुल लेनदेन में इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन का हिस्सा हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ा है। यह वृद्धि मात्रा की अपेक्षा मूल्य के रूप में अधिक लक्षित हुई है जिसमें इलेक्ट्रॉनिक स्वरूप (सारणी VI.11) पर उच्चतर मूल्य लेनदेन की ओर मुख्य रूप से प्रभाव दिखाई देता है।

6.118 वित्तीय स्थिरता की स्थितियों के सुदृढ़ीकरण के प्रति एक प्रमुख कदम वर्ष 2002 में भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड (सीसीआइएल) की स्थापना करना था जो सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा समाशोधन के लिए एक केंद्रीय काउंटरपार्टी (सीसीपी) की भूमिका भी अदा करता है। सरकारी प्रतिभूतियों में सभी गौण बाजार प्रत्यक्ष विक्रय और रिपो लेनदेन का निपटान भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड के माध्यम से किया जाता है। इस खंड में सभी ओटीसी कारोबार जो रिज़र्व बैंक की तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) प्लेटफार्म रिपोर्ट किये जाते हैं और वैसे कारोबार जो ऑनलाइन गुमनाम कारोबारी प्लेटफार्म (एनडीएस - ओएम) पर संविदाकृत होते हैं वे सभी आवश्यक वैधीकरण के बाद निपटान के लिए भारतीय समाशोधन निगम लिमिडेट द्वारा स्वीकार किये जाते हैं। ये कारोबार सुपुर्दगी बनाम निपटान (डीवीपी) III आधार पर अर्थात निधि-चरण के साथ-साथ प्रतिभूति-चरण पर एक निवल आधार पर निपटाए जाते हैं। भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड सभी लेनदेन के लिए एक केंद्रीय काउंटर पार्टी की भूमिका निभाता है तथा प्रतिभूतियों और लेनदेन के निधि-चरण दोनों के लिए भी गारंटी

सारणी VI.11: कागज आधारित बनाम इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन

(मात्रा हजार में और मूल्य करोड़ में)

वर्ष	मात्रा				मूल्य			
	पेपर आधारित	इलेक्ट्रॉनिक	कुल	इलेक्ट्रॉनिक का हिस्सा (%)	कागज आधारित	इलेक्ट्रॉनिक	कुल	इलेक्ट्रॉनिक का हिस्सा (%)
1	2	3	4	5	6	7	8	9
2003-04	10,22,800	1,67,554	11,90,354	14.1	1,15,95,960	49,67,811	1,65,63,771	30.0
2004-05	11,66,848	2,30,045	13,96,893	16.5	1,04,58,895	1,18,86,254	2,23,45,149	53.2
2005-06	12,86,758	2,87,489	15,74,247	18.3	1,13,29,134	2,24,39,287	3,37,68,420	66.5
2006-07	13,67,280	3,83,443	17,50,723	21.9	1,20,42,426	3,50,50,234	4,70,92,660	74.4

सारणी VI.12: भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड द्वारा सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा समाशोधन

(कारोबार की संख्या हजार में: मूल्य करोड़ में)

अवधि	सरकारी प्रतिभूति निपटान				विदेशी मुद्रा निपटान	
	एक दिवसीय		रेपो			
	कारोबार की संख्या	मूल्य	कारोबार की संख्या	मूल्य	कारोबार की संख्या	मूल्य
1	2	3	4	5	6	7
2004-05	161	11,34,222	24	15,57,907	466	40,42,435
2005-06	125	8,64,751	25	16,94,509	490	52,39,674
2006-07	137	10,21,536	30	25,56,502	606	80,23,078

देता है। भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड के माध्यम से निपटाए गए लेनदेन की मात्रा और स्वरूप में हाल के वर्षों में (सारणी VI.12) वृद्धि हुई है।

6.119 भुगतान प्रणालियां वित्तीय प्रणालियों में सहभागियों द्वारा सामना की जाने वाली तनाव की पहली सावधानी उपलब्ध कराती हैं। इस प्रकार यह यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि विभिन्न भुगतान प्रणालियों से एक केंद्रीकृत प्रणाली की ओर सूचना का एक समेकित प्रवाह बना रहे। समाशोधित चेकों, इसीएस के माध्यम से (जमा और नामे) प्रस्तुत किए गए लेनदेन, ईएफटी/एनईएफटी, कार्ड (क्रेडिट और डेबिट), आरटीजीएस, सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा की मात्रा और आधारित मासिक आधार पर सूचना प्राप्त करने के लिए एक व्यवस्था लागू की गई है। यह सूचना नियमित रूप से रिज़र्व बैंक की मासिक बुलेटिन के माध्यम से प्रसारित की जाती है।

6. वित्तीय स्थिरता में जोखिम

6.120 पूर्ववर्ती आध्यायों / खंडों में वित्तीय संस्थाओं, वित्तीय बाजारों और वित्तीय मूलभूत सुविधा यह प्रस्तावित करती है कि भारत में वित्तीय संस्थाएं विशेषतः वाणिज्यिक बैंक जो प्रणालीगत रूप से अधिक महत्वपूर्ण हैं एक मजबूत आधार पर स्थित हैं। पिछले वर्षों में वित्तीय बाजारों की सघनता और विस्तार में सुधार हुआ है जिसके द्वारा वित्तीय प्रणाली को अनुकूलता प्राप्त हुई है। हाल के वर्षों में लागू किये गये सुदृढ़ भुगतान और निपटान सुविधाओं ने वित्तीय प्रणाली के सुचारु कार्यकलाप में योगदान किया है।

6.121 हाल के वर्षों में मजबूत घरेलू समष्टि आर्थिक आधारों ने वित्तीय स्थिरता के लिए एक अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विगत चार वर्षों में वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि औसतन 8.6 प्रतिशत रही है और वर्तमान प्रवृत्तियां यह संकेत देती हैं कि आर्थिक गतिविधियों में यह गति जारी रहेगी। मुद्रास्फीति दर में भी वर्ष 2006-07 की अंतिम तिमाही के दौरान कुछ तेजी रहने के बाद सुधार हुआ है। हाल के वर्षों में नियम आधारित संरचना के अंतर्गत राजकोषीय समेकन की जारी प्रक्रिया ने उत्पादक क्षेत्रों में संसाधनों के उपयोग में सहायता की है। बाह्य क्षेत्र को पण्य वस्तु कारोबार में मजबूत वृद्धि, अदृश्य प्राप्तियों में भारी वृद्धि और मजबूत पूंजी अंतर्वाह सहित कई सकारात्मक विशेषताओं द्वारा वर्गीकृत किया गया है।

6.122 यद्यपि वित्तीय प्रणाली एक मजबूत आधार पर है, वित्तीय स्थिरता में कुछ जोखिम हैं। वर्तमान समय में भारत में वित्तीय स्थिरता में जोखिम मुख्यतः बाह्य स्रोतों से उत्पन्न होती है। इस खंड में रेखांकित जोखिम वित्तीय स्थिरता के लिए संभावित खतरे हैं, यद्यपि उनके घटित होने की संभावना दूर-दूर तक नहीं है।

तेल की उच्चतर और अस्थिर कीमतें

6.123 संसाधनों की आबंटन योग्य क्षमता को विरूपित करने के द्वारा मौद्रिक और स्थिरता वित्तीय स्थिरता के लिए एक प्रमुख खतरा बन सकती है। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में कच्चे तेल की उच्च और अस्थिर कीमतें घरेलू मूल्य स्थिरता के लिए भारी खतरा बन सकती हैं। चूंकि भारत एक बड़ा तेल आयातक देश है (कच्चे तेल की इसकी आवश्यकताओं का लगभग 70 प्रतिशत आयात करनेवाला), तेल की कीमतें विकास प्रक्रिया को जारी रखने तथा मूल्य और वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के लिए एक महत्वपूर्ण तत्व हैं। कच्चे तेल की हाजिर कीमतें जुलाई 2006 के 78 अमरीकी डॉलर प्रति बैरल से कम होकर जनवरी 2007 में 53 अमरीकी डॉलर प्रति बैरल हो गई हैं, तथापि उनमें मजबूत मांग की आशा, अमरीकी कच्चे तेल भंडार के निम्नतर स्तर, कड़े आपूर्ति मांग संतुलन और संभावित कठिन उच्चतर जोखिम वाले मौसम के कारण पुनः बढ़नी शुरू हो गई है। नवंबर 2007 के प्रथम सप्ताह में अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतें (डब्ल्यूटीआइ) 95 अमरीकी डॉलर प्रति बैरल (चार्ट VI.14) ऐतिहासिक ऊँचाई को पार कर गई है।

चार्ट VI.14: तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमतें और तेल की घरेलू कीमतों की गतिविधि (डब्ल्यू पी आई - खनिज तेल)

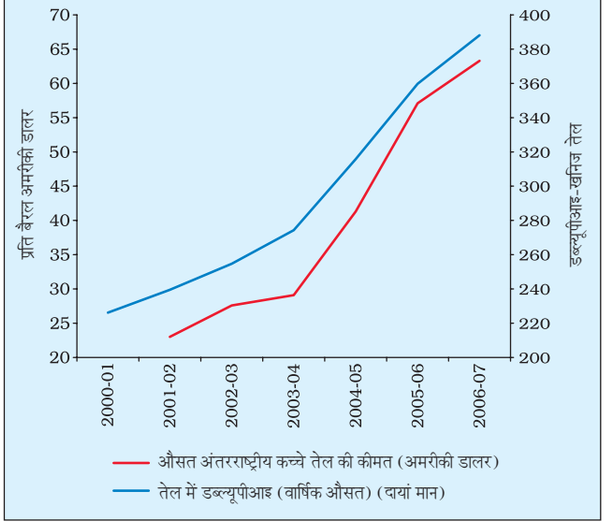

6.124 चूँकि भारत अपने कच्चे तेल की आवश्यकताओं के अधिकांश भाग का आयात करता है अतः अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल की कीमतों मे वृद्धि से देश में (बॉक्स VI.7) उत्पादन और मुद्रास्फीतिकारी स्थितियों में महत्वपूर्ण जटिलता हो गई है । अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल (औसत) की कीमतें फरवरी 2007 से (नवंबर 2007 तक) लगभग 53 प्रतिशत तक तब बढ़ी हैं जब घरेलू पेट्रोलियम उत्पादों पर लागू कीमतों में कमी हुई है। अंतरराष्ट्रीय तेल की कीमतों से घरेलू पेट्रोलियम उत्पादों के पास-थ्रू को अपूर्ण समझते हुए मुद्रास्फीति के लिए यह एक वृद्धिशील जोखिम का स्रोत बन जाता है तथापि घरेलू कीमतें यदि नहीं बढ़ती हैं तो अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल में वृद्धि घरेलू तेल कंपनियों के वित्तीय कार्यनिष्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी। इससे राजकोषीय लागतों में भी वृद्धि होगी जो नियम आधारित राजकोषीय समेकन प्रक्रिया की दृष्टि से महत्व प्राप्त करती हैं। अंतरराष्ट्रीय बाजारों में तेल की कीमतों में वृद्धि से चालू खाता घाटे और विनिमय दर पर प्रभाव पड़ेगा । वर्ष 2006-07 के दौरान तेल आयात की मात्रा में 19.3 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई जबकि मूल्य के आधार पर वृद्धि दर पण्य वस्तु व्यापार खाता घाटा को बढ़ाते हुए 29.8 प्रतिशत रही जिसमें अदृश्य प्राप्तियों की वृद्धि के द्वारा अधिक मात्रा में सुधार हुआ। इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय बाजार में तेल की कीमतों में और वृद्धि से घरेलू मुद्रास्फीति पर विशेष रूप से प्रभाव पड़ेगा क्योंकि पास-थ्रू अपूर्ण रहा है तथापि मुद्रास्फीति का वर्तमान स्तर एक सुविधाजनक कारक है।

वैश्विक वित्तीय बाजारों की हाल की गतिविधियां

6.125 बाजारों के विभिन्न खंडों तथा देशों के बीच वित्तीय बाजार के समन्वय की बढ़ी हुई मात्रा ने संकट का संक्रमण विश्व के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में तेजी से होना आसान बना दिया है। इसने विश्व भर में वित्तीय प्रणालियों की अतिसंवेदनशीलता बढ़ा दी है तथा अंतरराष्ट्रीय वित्त की आवाजाही में इसके लिए वित्तीय क्षेत्र के विनियामकों और पर्यवेक्षकों द्वारा अतिरिक्त सतर्कता जरूरी हो गई है। हाल की अवधि में, विश्व भर में जिस प्रमुख गतिविधि की ओर ध्यान आकृष्ट हो रहा है वह है - अमरीका और यूरोप के वित्तीय बाजारों में खलबली तथा अमरीका में सब-प्राइम बंधक संकट द्वारा उत्प्रेरित ऋण बाजार के विश्वास में आकस्मिक गिरावट।

6.126 वैश्विक वित्तीय बाजार जुलाई 2007 की शुरुआत से ही अधिक अस्थिर और लगातार जोखिम विमुख होते गए जो कई श्रेणी की आस्तियों पर कीमत लागत अंतर और ऑप्शन आधारित प्रयुक्त उतार-चढ़ावों में विस्तार के रूप में परिलक्षित हुआ। इस संकट का जनन-केंद्र अमरीकी सब-प्राइम बंधक बाजार था जिसने मूलधन और ब्याज भुगतान पर बढ़ती हुई चूक के कारण महत्वपूर्ण दबाव अनुभव किया है। वर्ष 2007 के मध्य तक दर-निर्धारण एजेंसियों ने सब-प्राइम बन्धक द्वारा संपार्श्विकीकृत आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों (एबीएस) में निम्न श्रेणी निर्धारण की शुरुआत की जिसका परिणाम बाद में उन संपर्श्विकीकृत ऋण देयताओं (सीडीओ) के निम्न श्रेणी निर्धारण के रूप में घटित हुआ जो निम्न-दर निर्धारित आस्ति-समर्थित प्रतिभूतियों की श्रृंखलाओं का संपार्श्विक रूप में उपयोग करती हैं। अमरीका में बंधक संबंधी लिखतों में ऋण जोखिम में वृद्धि विभिन्न श्रेणी के सभी बाजारों में ऋण मानदण्डों के शिथिल होने तथा इसका प्रभाव अन्य ऋण बाजारों पर होने के परिणामस्वरूप हुई। समग्र हानि और निवेश संबंधी अनिश्चितता ने वित्तीय संस्थाओं के लिए संभावित व्यापक जटिलताओं के साथ बाजार और चल-निधि जोखिम को बढ़ाया है। बही में दर्ज की गई हानि और भविष्य में नकदी प्रवाह में हानि के बारे में अनिश्चितता ने बंधक आपूर्ति श्रृंखला के विभिन्न खण्डों पर प्रभाव डालना शुरू कर दिया है। ये हानियाँ अमरीका की सीमा से बाहर यूरोपीय और एशियाई बाजारों तक व्याप्त हैं। जापानी ईक्विटी बाजार पर इसका सबसे बुरा प्रभाव पड़ा क्योंकि जापानी मुद्रा में तीव्र मूल्यवृद्धि हुई। 'सुरक्षा के लिए दौड़' से विकसित बॉण्ड बाजार प्रतिफलों में तेज गिरावट हुई। द्विवर्षीय अमरीकी खजाना बिल प्राप्ति में जुलाई के अंत से अगस्त 2007 के मध्य के बीच लगभग 30 आधार बिन्दुओं तक गिरावट आई। मुद्रा बाजारों ने भी बढ़ी हुई अस्थिरता का अनुभव किया।

6.127 वर्तमान संकट के मुख्य तत्त्व उपभोग की गई व्युत्पन्नियों की जटिल प्रकृति; सुविधा प्रदान करने की भारी मात्रा; वित्तीय

बॉक्स VI.7: अंतरराष्ट्रीय तेल कीमत- प्रभाव

तेल कीमतों के प्रभाव का आकलन कम और लंबी दोनों अवधि के लिए किया जाता है। कम अवधि में, अंतरराष्ट्रीय रूप से, तेल कीमत मुद्रास्फीति के तीन स्रोतों का उल्लेख किया गया है। ये हैं (i) तेल की मांग और आपूर्ति में अंतर और विचारों से प्रेरित व्यवधान जैसा कि इन समाचारों की प्रतिक्रिया से प्रकट होता है, (ii) व्यापारियों द्वारा बड़ी स्थितियां और इंवेन्टरी में महत्वपूर्ण वृद्धि। इसके विपरीत, लंबी अवधि के कारकों में (i) तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाएं जैसे भारत और चीन से बढ़ती हुई मांग, (ii) ऊर्जा क्षमता में सुधार, (iii) तेल अन्वेषण और उत्पादन से संबंधित अनिश्चितता, और (iv) भू-राजनीतिक कारक शामिल हैं।

तेल कीमत मुद्रास्फीति का परिणाम विशेष तौर पर तेल आयातक देशों के प्रति प्रतिकूल रहा है। सामान्यतया, तेल-आयातक औद्योगिक कंपनियों की तुलना में निम्न आय वाले तेल-आयातक कंपनियों पर आउटपुट में कमी, मुद्रास्फीति में उत्तरोत्तर वृद्धि/कमी और भुगतान परिणामों के प्रतिकूल संतुलन का कठोर प्रभाव रहा है। इसके अलावा, तेल-निर्यातक देशों में तेल कीमत आघातों का विस्तारी प्रभाव सामान्यतया तेल-आयातक देशों में संकुचनकारी प्रभाव से काफी कम रहा है जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक प्रगति धीमी हुई है। तेल आयातक देशों में उत्पादन के बढ़ते लागत की वजह से व्यापार पर प्रतिकूल प्रभाव के परिणामस्वरूप तेल आघात ने भी एक महत्वपूर्ण इनपुट के रूप में आयातित तेल पर खुलेपन और निर्भरता के स्तर के साथ देशों के अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा को कम किया है। तेल कीमत आघात वित्तीय संतुलन को कम करने के प्रति प्रवृत्त होता है यदि सरकार अंतर्राष्ट्रीय तेल कीमत वृद्धि अवशोषित करती है और घरेलू उपभोक्ता पर प्रभाव अस्थिर और अपूर्ण होता है। तेल आघात के कम अवधि के अधिकतर मामलों में आउटपुट की महत्वपूर्ण क्षति अंतिम परिणाम रही है और लंबी अवधि के मामलों में कल्याण का सामान्य स्तर अंतिम परिणाम रहा है। हाल का एक विश्लेषण आकलन करता है कि कीमत का आपूर्ति-उन्मुख दोहरीकरण उभरते हुए एशिया में बेसलाइन (अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक, 2007) से ऊपर 1.4 प्रतिशत अंक जितना मुद्रास्फीति दर बढ़ाएगा। मुद्रास्फीति प्रभाव अधिक होता यदि तेल-आयातकों को वर्तमान परिणामी लेखा घाटे को वित्त प्रदान करने में कठिनाई होती और यदि आर्थिक सहायता जो अब तक ऊर्जा मूल्य वृद्धि तक सीमित थी, को आगे घटाने या समाप्त कर लिया माना जाता।

तेल कीमतें बढ़ जाने पर केंद्रीय बैंकों के समक्ष विकास और मुद्रास्फीति के बीच संतुलन रखने की गंभीर समस्या खड़ी हो जाती है। अत: यथोचित नीति बनाने के लिए यह आवश्यक है कि मुद्रास्फीति और मुद्रास्फीति की आशंकाओं के स्रोतों का ठीक तरह से अंदाजा लगाया जाए (बरनानान्के, 2004)। तथापि, हाल के आर्थिक जगत के इतिहास से ज्ञात होता हे कि तेल कीमतों में अचानक वृद्धि के कारण मुद्रास्फीति पर पड़ने वाले दबाव से निपटने में केंद्रीय बैंकों को अच्छी सफलता मिली है। 1970 के दशक और 1980 के दशक के प्रारंभ में स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत थी। उस समय तेल कीमतों में वृद्धि के कारण मौद्रिक नीति में कड़ा बनाना पड़ा जिसके चलते मूल्यों में वृद्धि हुई और विकास पर बुरा असर पड़ा।

भारत के संदर्भ में, सन 2006-07 में, तेल आयात की राशि जीडीपी के प्रतिशत के रूप में 6.3 प्रतिशत थी जबकि सन 2003-04 में 3.4 प्रतिशत थी। अत:, ऐसा माना जा सकता है कि अंतरराष्ट्रीय तेल कीमत और घरेलू तेल कीमतों में गहरा संबंध है। वर्ष 2004-05 और 2005-06 में जो मुद्रास्फीति की स्थिति उत्पन्न हुई उसका प्रमुख कारण तेल कीमतों में वृद्धि होना था (चार्ट क)।

चार्ट क : तेल की मुद्रास्फीति और समग्र मुद्रास्फीति में तेल का योगदान

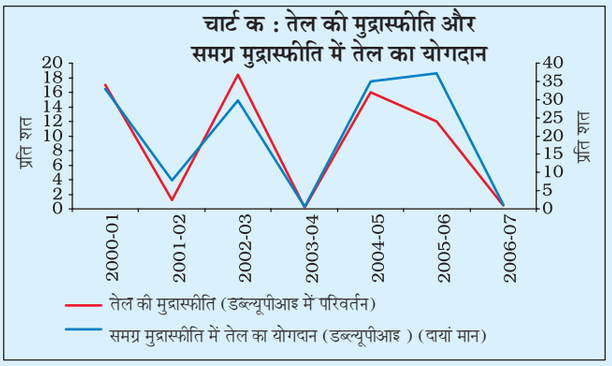

कतिपय अध्ययनों में अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि का घरेलू मुद्रास्फीति और उत्पादकता पर पड़ने वाले प्रभाव का अनुभवसिद्ध मूल्यांकन करने की कोशिश की गई है। अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (2000) द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चला है कि तेल कीमत में 85 यूएस डॉलर प्रति बैरल की स्थिर वृद्धि होने से एक वर्ष बाद मुद्रास्फीति में 1.3 प्रतिशत अंकों की वृद्धि होती है और वार्षिक जीडीपी विकास में 0.1 प्रतिशत अंकों की गिरावट आती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में, भट्टाचार्य और भट्टाचार्य(2001) के अनुसार तेल कीमत में 20 प्रतिशत बिंदुओं की वृद्धि हो जाने से अन्य वस्तुओं में अधिकतम 1.3 प्रतिशत अंकों से मुद्रास्फीति बढ़ जाती है जिससे उत्पादकता में 2.1 प्रतिशत अंकों की गिरावट आती है, जबकि उत्पादकता के विकास में, और गिरावट से उबरने की शुरुआत लगभग एक वर्ष बाद होती है। अक्तूबर 2004 में रिज़र्व बैंक द्वारा जारी वर्ष 2004-05 की वार्षिक नीतिगत वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा में इगित किया गया है कि नीतिगत हस्तक्षेप न रहने पर कच्चे तेल की कीमतों में प्रत्येक डॉलर की वृद्धि पर डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति में पर 15 आधार अंकों की सीधी वृद्धि होगी और इसके अतिरिक्त 15 आधार अंकों का अप्रत्यक्ष असर पड़ेगा।

संदर्भ:

बीआइएस (2007), वार्षिक रिपोर्ट;www.big.org.<http:www.big.org>

बरनान्के बेन एस.(2004), अक्तूबर में डार्टन कॉलेज, अल्बानी, जार्जिया में आयोजित विशेष व्याख्यानमाला में 'गवर्नर बेन एस.बरनान्के द्वारा की गई टिप्पणियां'

हेमिल्टन, जे.डी. (1983): 'द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तेल और समष्टि व्यवस्था, जर्नल ऑफ पॉलिटिकल इकानॉमी, 91, पृष्ठ 228-48।

भट्टाचार्य के और भट्टाचार्य आई. (2001), 'तेल कीमतों में वृद्धि का भारत में मुद्रास्फीति और उत्पादकता पर असर', इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, दिसंबर 21।

बुरबिज, जे और ए हैरिसन (1994); 'टेस्टिंग फॉर द इफेक्ट्स ऑफ ऑयल प्राइस राइजेस यूजिंग वेक्टर आटो रिगरेशन्स' इंटरनेशनल इकोनॉमिक रिव्यू, 25, पृष्ठ 459-84।

अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष, (2000); 'अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर उच्च तेल मूल्यों का प्रभाव', मिमयो।

बाजारों में व्याप्त जोखिमों को कम आँका जाना; कुछ ऋण लिखतों और प्रश्नाधीन व्युत्पन्नियों में बड़ी वित्तीय संस्थाओं का भारी मात्रा में आश्चर्यजनक रूप से एक्सपोजर और संक्रामक गति रहे हैं (बॉक्स VI.8)।

बॉक्स VI.8: अमरीका में सब-प्राइम बन्धक बाजार : हाल की गतिविधियां

सब-प्राइम बन्धक एक प्रकार का आवासीय ऋण है जो ऑइमट बन्धक से भिन्न होता है। अत:, इसके पूर्णतया पुनर्भुगतान की गुंजाइश कम रहती है। सब प्राइम ऋण देते समय उधारकर्ता का ऋण लेखा जोखा, ऋण सेवा और आय अनुपात (55 प्रतिशत से अधिक) तथा बन्धक ऋण और मूल्य अनुपात (85 प्रतिशत से अधिक) का मूल्यांकन किया जाता है। हाल में अमरीका में सब-प्राइम ऋण की जो समस्या उत्पन्न हुई वह मुख्य रूप से आवासीय ऋण बाजार से संबंधित थी। इस समस्या का पहला संकेत तब मिला जब अधिक मात्रा में ऑपूर्व भुगतान की चूकट होने लगी, जिसके अंतर्गत उधारकर्ता पहले तीन मासिक किश्तों में से एक या दो किश्त भरने में चूक कर देता है और कालांतर में यह अप प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। आवासीय संपत्ति क्षेत्र में मंदी के साथ-साथ ऋण दाताओं द्वारा समझौते की दरों पर ऋण देना भी चूक और अप प्रवृत्ति कारक बने। ब्याज दर बढ़ जाने तथा मकानों की कीमतें घट जाने के कारण, और कई क्षेत्रों में वह ऋणात्मक बन जाने से कई उधारकर्ताओं के पास चूक करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा, क्योंकि आवासीय ईक्विटी के कम मात्रा में रहने या बिल्कुल ही न रहने से ऋण की समय पूर्व अदायगी या पुनर्वित्त विकल्प व्यावहारिक नहीं थे। समझौते की ब्याज दरों के अंतर्गत ऋण दाताओं ने उधारकर्ताओं को प्रारंभ में कम राशि का पुनर्भुगतान और बाद में उच्च राशि का पुनर्भुगतान करने की छूट दे दी। मकानों की कीमतों में गिरावट आ जाने से मकान मालिकों के लाभ में कमी आई जिसके कारण वे समूचा ऋण चुकता नहीं कर पाए और परिणामत: अपप्रवृत्ति और चूक की घटनाएं बढ़ीं।

सब प्राइम उधारकर्ताओं को प्राइम उधारकर्ताओं की तुलना में ऊंचे ब्याज दर से ऋण दिया जाता है क्योंकि उनके मामले में चूक होने की जोखिम अधिक रहती है। सब-प्राइम ऋण संरक्षित होते हैं। संपार्श्विक ऋण संबंधी दायित्व की तरह प्रतिभूतियों को आस्तियों का आधार होता हैं। बचाव निधियां (हेज फंड्स), पेन्शन फंड और बैंक जैसे संस्थागत निवेशक इन प्रतिभूतियों में निवेश करते हैं। यद्यपि सब-प्राइम बन्धक और चूक राशि की सही सही मात्रा ज्ञात नहीं है, मोर्टगेज एसोसिएशन के अनुसार मोर्टगेज बाजार में लगभग दस ट्रिलियन अमरीकी डॉलर की राशि लगी हुई है जिसमें अमरीकी मोर्टगेज मार्केट के प्राइम बन्धक का 80 प्रतिशत हिस्सा है और सब-प्राइम बन्धक का 15 प्रतिशत, अर्थात 1.5 ट्रिलियन अमरीकी डॉलर सब-प्राइम मार्केट की हिस्सेदारी 10 से 15 प्रतिशत है जो अमरीका की मोर्टगेज मार्केट की वास्तविक व्याख्या के अनुसार है। बन्धक बैंकर्स एसोसिएशन की हाल की रिपोर्ट के अनुसार 30 या अधिक दिनों से लंबित सब-प्राइम ऋण का प्रतिशत वर्ष 2007 के पहले तीन महीनों में 15.8 प्रतिशत तक पहुंच गया जो अब तक का सर्वाधिक रहा और पिछले वर्षों के अंतिम तीन महिनों में 14.4 प्रतिशत से अधिक रहा।

सब-प्राइम ऋण संकट का असर वित्तीय प्रणाली के दूसरे घटकों पर भी पड़ा। सब-प्राइम ऋण में आए संकट के कारण जोखिम लेने की प्रवृत्ति पर विपरीत असर पड़ा और वित्तीय बाजार में उथलपुथल मच गई। सब-प्राइम मोर्टगेज ऋण को समयपूर्व चुकता करने के लिए निर्धारित की गई ब्याजदर में तीव्र वृद्धि कर दी गई, परिणामत: लगभग 24 प्राइम मोर्टगेज ऋण फर्म या तो डूब गई या उन्हें दिवालिया घोषित करना पड़ा। इन कंपनियों के डूब जाने से 6.5 ट्रिलियन यूएस डॉलर के मोर्टगेज प्रतिभूति बाजार पर प्रतिकूल असर पड़ा।

सब प्राइम मार्केट की समस्या उभरने के तुरंत बाद सुनियोजित ऋण (स्ट्रक्चर्ड ऋण)और मोर्टगेज मार्केट उत्पादों की खरीद-बिक्री बिल्कुल ही बंद हो गई। निवेशकों को अपनी निवेश स्थिति ठीक करने के लिए अन्य उपाय करने पड़े। परिणामस्वरुप निवेशकों को परेशानी से ग्रस्त प्रतिपक्ष के मार्जिन कॉल का सामना करना पड़ा। कोई खरीददार न होने की वजह से वे अपनी प्रतिभूतियां भी नहीं बेच पाए जिससे वे नकद राशि जुटा पाते। अंतत: उन्हें मुद्रा बाजार से नकद राशि उठानी पड़ी। सुनियोजित उत्पादों में निवेश करने वाली बचाव निधियों को भी निधि आहरण तथा मार्जिन कॉल का सामना करना पड़ा। कुछ बैंकों को भी जोखिम-भरे संपत्ति ऋणों से नुकसान पहुंचा। जोखिम युक्त बॉण्ड के संबंध में चूक से बचाव हेतु लागत में भी वृद्धि हुई जाती है। यह भी जानकारी मिली कि कुछ निधि प्रबंधकों ने कैरी ट्रेड में उधार देना कम कर दिया। अधिकांशत: वाणिज्य पत्रों के माध्यम से अल्पावधि ऋण लेनेवाले और दीर्घावधि ऋण में निवेश करने वाले संरचित निवेश सुविधा (स्ट्रक्चर्ड इन्वेस्टमेंट वेहिकल) इस चलनिधि संकट के प्रमुख कारक रहे।

इसके पश्चात जोखिम से बचने के लिए जो उपाय किए गए उससे संयुक्त अमरीका के शेयर बाजार में सस्ते दामों पर शेयरों की बिकवाली हुई। नुकसान से बचने के लिए संस्थागत निवेशकों ने ईएमई शेयर बाजार से बाहर निकालना शुरु कर दिया। इसका असर यह हुआ कि प्रमुख विकसित और उभरती बाजार अर्थ-व्यवस्थाओं में अगस्त 2007 के मध्य में शेयर बाज़ार बुरी तरह लुढ़के।

यह भी देखने को मिला कि संयुक्त अमरीका के कुछ बैंकों और यूरो बहुल क्षेत्रों ने उधार देने के बजाए नकदी राशियां अपने पास रखना उचित समझा। इससे ऋण शर्तों में कड़ाई आई, और नकदी के लिए होड़ लग गई। परिणामस्वरूप, अमरीका और ईसीबी को बाजार में हस्तक्षेप करना पड़ा। 9 अगस्त, 2007 को ईसीबी ने 94.8 बिलियन यूरो (129.8 बिलियन यूएस डॉलर) और फेडरल रिज़र्व ने 24 बिलियन यूएस डॉलर बाज़ार में उपलब्ध कराए। ईसीबी ने इसके परिचालनों का 'फाइन ट्यूनिंग' के रूप में वर्णन किया।

वित्तीय बाज़ारों में हाल में उत्पन्न समस्या से यह परिलक्षित होता है कि वैश्विक स्तर पर सांकेतिक और वास्तविक ब्याज दरों में निरपेक्ष रूप से कमी आई है जिससे जोखिम वहन करने की क्षमता में वृद्धि हुई है, बावजूद इसके कि जोखिम भरपाई अधिक कठिन बन गई है। संयुक्त अमरीका, यूरो क्षेत्र और जापान जैसी प्रमुख अर्थ-व्यवस्थाओं द्वारा अपनाई गई लचीली मौद्रिक नीति के फलस्वरूप मुल मौद्रिक राशियों में उच्च वृद्धि हुई है, जबकि यदि वास्तविक आर्थिक विकास की तुलना में वृद्धि दर का आकलन किया जाता, तो वह कम रहती। इसके बावजूद मुद्रा-स्फीति नियंत्रण में है। परिणामस्वरूप, वित्तीय बाजारों में चलनिधि की भरमार हो गई जिसका विपरीत असर संयुक्त अमरीका और रशिया के बीच समष्टिगत असंतुलन पर भी पड़ा। यदि मुद्रास्फीति को निम्न दर पर स्थिर रखा जाता और वैश्विक स्तर पर लचीली मौद्रिक नीति अपनाई जाती तो केंद्रीय बैंक और मौद्रिक नीति में मुद्रास्फीति और ब्याज दरों को निश्चित रूप से निम्न स्तर पर रखने के लिए अधिक विश्वास उत्पन्न होता जिससे जोखिम लागत में कमी आती और जोखिम उठाने की क्षमता बढ़ती। अत: यह कहा जा सकता है कि मुद्रास्फीति दर में कमी आने, और लचीली मौद्रिक नीति के अंतर्गत बाज़ार में अत्याधिक चलनिधि उपलब्ध कराने के फलस्वरूप, वास्तविक और सांकेतिक ब्याज दरों में जो कमी आई उससे वर्तमान मुद्रा संकट की शुरूआत हुई। अत:, यह माना जा सकता है कि सब-प्राइम समस्या संकट का आसार है, न कि कारण। दूसरा महत्वपूर्ण कारण वित्तीय पर्यवेक्षण प्रणाली से संबंधित है जिसमें बैंकिंग पर्यवेक्षकों द्वारा बैंक और गैर बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थों और तुलन-पत्र से इतर ऋणों को ठीक तरह से न पहचानना या दर्ज न करना है (मोहन, 2007)।

संदर्भ:

किफ, जे और मिल्स, पी.(2007), मनी फॉर नथिंग एण्ड चेक्स फॉर फ्री: रीसेंट डेवलपमेंट्स इन यूएस सब-प्राइम मोर्टगेज मार्केट्स, आइएमएफ वर्किंग पेपर, डब्ल्यूपी/07/188

मोहन, राकेश (2007) आइआइएफ के एशिया क्षेत्र आर्थिक मंच के उद्घाटन के अवसर पर दिया गया दीक्षांत भाषण;www.rbi.org.in

6.128 अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में हाल की अस्तव्यस्तता बैंकों को प्राप्त लीवरेज तथा कुछ अन्य निवेश प्रयोजन सुविधाओं विशेषतः प्रतिरक्षा निधियों द्वारा गहन हो गई थी (बॉक्स VI.9)।

बॉक्स VI.9: बचाव निधियां (हेज फंड्स)

बचाव निधियां मिश्रित निवेश निधियों का एक संचय है जिसके अंतर्गत पोर्टफोलियो निवेश में अस्थिरता को कम करने के लिए बचाव की विभिन्न तकनीक का उपयोग किया जाता है। स्टुल्ज (2007) के अनुसार ञ्बचाव निधिट एक ऐसी निधि संचय है जिस पर कोई नियम लागू नहीं हैं और जिसका प्रबंधन निवेश सलाहकार, हेज फंड मैनेजर द्वारा किया जाता है, जिसके पास इस निधि के इस्तेमाल की अत्यधिक छूट रहती है। बचाव निधियों के प्रबंधक पोर्टफोलियो निवेश का आकार बढ़ाने के लिए जटिल निवेश प्रक्रिया अपनाते हैं, जिसके लिए वे अति उन्नत डेरिवेटिव कॉन्ट्रैक्ट का उपयोग करते हैं। आर्थिक क्षेत्र में ये बचाव निधियां म्युच्युअल फंड की तरह ही काम करती हैं। दोनों ही मामलों में निवेशक इस आशा के साथ फंड मैनेजर के पास धन जमा करते हैं कि उनका मूल धन अच्छे लाभ के साथ उन्हें वापस मिले। किंतु बचाव निधि के अंतर्गत पेचीदा निवेश नीति अपनाई जाती है जिसमें निवेश को बाज़ार की प्रतिकूल स्थिति से बचाने के लिए ञ्लॉगट और ञ्शॉर्टट पोजीशन का उपयोग किया जाता है। यह निधि विशेष रूप से निजी भागीदारी के माध्यम जुटाई जाती है और कर तथा नियमों आदि से बचने के लिए सामान्यत: ऑफसोर में स्थापित होती है। इस निधि में केवल बड़े निवेशक ही निवेश कर सकते हैं। इस प्रकार का प्रतिबंध रहने से पंजीकरण और अन्य नियमों से बचने का लाभ मिल जाता है। अब तक इसमें उच्च मालियत वाले व्यक्तियों और संस्थागत निवेशकों ने ही निवेश किया है। हाल के कुछ वर्षों में बचाव निधि में निवेश करने वाले संस्थागत निवेशकों की संख्या उल्लेखनीय रूप से बढ़ गई है जिसमें पेन्शन निधि, चैरिटी, विश्वविद्यालय, एंडोमेंट और फाउंडेशन भी शामिल हैं (यूबाइड, ए.2006)।

बचाव निधि के अंतर्गत सामान्यत: ऐसी आस्तियों को ढूंढ़ा जाता है जिनकी उचित कीमत न आंकी गई हो। इसके बाद इन आस्तियों के बचाव की व्यवस्था की जाती है ताकि संबंधित आस्ति का उचित मूल्य आंके जाने पर उनसे लाभ हो सके और अन्य तत्वों का प्रतिकूल असर उस पर न पड़े। तथापि, ऐसा नहीं है कि बचाव निधि द्वारा प्राप्त की गई सभी आस्तियों की हेजिंग की जाती हो क्योंकि कुछ जोखिम ऐसे होते हैं जिनसे बचने के लिए या तो अधिक लागत लगानी पड़ती है या उनमें निहित समस्याओं का निपटान कठिन होता है। चूँकि बचाव निधियां बाजार की अक्षमता पता लगाकर उन्हें ठीक करने की कोशिश करती हैं, अत: वित्तीय बाजार में प्रतिभूतियों की कीमतों को वास्तविक मूल्य के नजदीक लाने में बचाव निधियां महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। बचाव निधियों की कार्यक्षमता उनके निधि प्रबंधक को किए जाने वाले भुगतान के माध्यम से सुनिश्चित की जाती है जो सामान्यत: निवेशकों को होने वाले लाभ पर आधारित होती है। इसके अलावा, निधि प्रबंधक अपनी ओर से भी बड़ी राशि की पूंजी का निवेश करते हैं जिससे उनके अपने हितों की भी रक्षा होती है, साथ-साथ निवेशकों के हितों की भी रक्षा होती है तथा जोख़िम का पूरा-पूरा ध्यान भी रखा जाता है।

ऐसा माना जाता है कि 1949 में संयुक्त अमरीका में ए.डब्ल्यू जोन्स ने शार्ट सेलिंग और लीवरेजिंग जैसे दो निवेश साधनों को मिलाकर पहली बार बचाव निधि की स्थापना की। यद्यपि म्युच्युअल फंड की तुलना में बचाव निधि उद्योग का आकार अभी छोटा है, फिर भी इसका विस्तार काफी तेजी से हो रहा है। वर्ष 1993 में म्युच्युअल फंड द्वारा प्रबंधित आस्तियों की तुलना में बचाव निधियां केवल 4 प्रतिशत निधियों का ही प्रबंधन कर रही थी, जो 2005 में बढ़कर 10 प्रतिशत हो गईं। ऐसा अनुमान है कि वर्ष 2006 में 1 ट्रिलियन यूएस डॉलर का निवेश बचाव निधियों में किया गया था (स्टुल्ज, 2007)।

यद्यपि शेयर बाज़ार में निवेश की अपेक्षा बचाव निधियों से होने वाली आय अधिक स्थिर होती है, किंतु निधि/पूंजी में तीव्र गति से हानि की संभावना भी होती है। लगभग 10 प्रतिशत बचाव निधियां हर वर्ष डूब जाती हैं (स्टुल्ज, 2007)। अत:, नियंत्रकों के लिए निवेशकों की सुरक्षा, वित्तीय संस्थाओं को जोखिम, चलनिधि जोखिम और अत्यधिक अस्थिरता की दृष्टि से ये बचाव निधियां चिंता का विषय बन गई हैं। अत्यधिक नुकसान के कारण यदि निवेशक अपनी निधि आहरित कर लें या लेखा-जोखा रखने में भारी गड़बडी हो जाए तो बचाव निधि डूब सकती है। चूंकि ये निधियां वित्तीय संस्थाओं से ऋण लेती हैं, प्रतिभूतियों की खरीद-बिक्री में भाग लेती हैं और डेरिवेटिव सौदों में काउंटर पार्टी की भूमिका निभाती हैं, इसलिए वित्तीय संस्थाओं को इनसे जोखिम बना रहती है। लीवरेज की वजह से, यदि बचाव निधि की आस्तियों के मूल्य में अचानक गिरावट आ जाए और ऐसी आस्तियों के बाज़ार में चलनिधि की कमी हो, तो बचाव निधियां संकट में आ सकती हैं। यदि बड़ी बचाव निधियां डूब जाती हैं तो मुख्यत: उन वित्तीय संस्थाओं पर बहुत असर पडता है जिन्होंने इन निधियों को ऋण उपलब्ध कराया। मूल्यों की प्रतिकूल स्थिति में यदि बचाव निधियां व्यवसाय चक्र से तुरंत बाहर निकलने में सफल हो जाती हैं तो चलनिधि का जोखिम उत्पन्न हो जाता है। समस्या उस समय अधिक गंभीर बन जाती है जब कई बचाव निधियां एक ही प्रकार के व्यवसाय में लगी हों। बचाव निधियां खरीद बिक्री के माध्यम से वास्तविक मूल्यों में भारी परिवर्तन ला सकती हैं, जिससे बाज़ार में भारी उथल-पुथल मच सकती है।

ऊपर जिन जोखिमों का उल्लेख किया गया है वे वित्तीय स्थिरता की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। ऐचेनग्रीन और मथेसन (1999) ने अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार के परिप्रेक्ष्य में बचाव निधियों के संबंध में एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया है कि क्या बचाव निधियां समूचे समूह को गुमराह करके या कमजोर मुद्रा के खिलाफ उठी आम लहर में शामिल होकर विदेशी मुद्रा बाज़ार को अस्थिर कर सकती हैं। बहरहाल, अब तक प्राप्त अनुभवों के आधार यह कह पाना मुश्किल है कि बचाव निधियां अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न करने में कारक बन सकती हैं। वर्ष 1997-98 में उभरते बाज़ारों में जो संकट उत्पन्न हुआ था उसके लिए बचाव निधियों को प्रमुख कारण माना गया है। तथापि, ऐचेनग्रीन और मथेसन (1999) के अनुसार, जिस समय यह संकट उत्पन्न हुआ था उस समय बचाव निधियों का अस्तित्व इतना छोटा था कि वे ऐसी कोई अस्थिरता उत्पन्न नहीं कर सकती थी। केवल बाह्ट एकमात्र एशियाई मुद्रा थी जिसके मामले में बचाव निधियों ने मुख्य रूप से एक साथ शार्ट पोजिशन का सहारा लिया। मुद्रा अस्थिरता का असर जब अन्य एशियाई देशों में पहुंचा उस समय बचाव निधियां सतर्क नहीं थीं। बाज़ार के खिलाड़ियों के अनुसार इंडोनेशिया, मलेशिया और फिलिपाइन्स में मुद्रा केंद्र, वाणिज्यिक तथा निवेश बैंक और घरेलू निवेशक प्रमुख शार्ट सेलर्स थे जिन्होंने इंटर-ब्रोकर मार्केट और घरेलू ऋण में अपनी बेहतर पहुंच के कारण 'शार्टट में फायदेमंद तरीके से भाग ले लिया। अमरीका में स्थित लांग टर्म कैपिटल मैनेजमेंट को हुए भारी नुकसान के बारे में बैंकों के एक समूह का मानना था कि इससे वित्तीय बाज़ारों को जड़ से धक्का लगा, जिससे बचाव निधि की कार्य-प्रणाली पर प्रश्न चिन्ह लग गया है। अत:, नियंत्रकों को चाहिए कि वे बचाव निधि की इस कार्य पद्धति के बारे में उचित भूमिका निभाएं (सेबी, 2004)।

संदर्भ:

ऐचेनग्रीन, बी और मथेसन, डी.(1999) हेज फंड्स: व्हाट डू वी रियली नो ? इकॉनामिक इशू, नं.19, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष।

स्टुल्ज, आर.एम.(2007), हेज फंड्स: पास्ट, प्रेजंट एंड फ्यूचर, जर्नल ऑफ इकॉनामिक पर्सपेक्टिव खंड 21, सं.2।

यूबाइड ए.(2006), डीमिस्टिफाइंग हेज फंड्स; फाइनान्स एण्ड डेवलपमेंट; जून, खंड43, सं.2।

सेबी (2004), पॉलिसी ऑप्शन्स परमिटिंग फोरेन हेज फंड्स टू ऐक्सेस इंडियन सिक्यूरिटीज मार्केट; www.sebi.gov.in

भारत सरकार (2005)विदेशी संस्थागत निवेश को बढ़ावा देने और सट्टे की निधियों के प्रति पूंजी बाज़ार की रुख की जांच करने हेतु गठित विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट; www.finmin.nic.in

6.129 तथाकथित ज्दुलाई व्यापारट (कैरी ट्रेड) द्वारा बड़े पैमाने पर किए गए आहरण, जिनमें निवेशकों ने जापान में कम दर पर उधार लेकर अमरीका और कुछ अन्य देशों में उच्च दर पर उधार दिया, के कारण विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता में तीव्र वृद्धि हुई (बॉक्स VI.10)

6.130 हाल में हुई वित्तीय गतिविधियाँ अमरीकी अर्थव्यवस्था के परिदृश्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। मकानों की कीमत में कमी, ऋण की उपलब्धतता और उधार के मानकों को कड़ा बनाने के कारण मकानों की मांग में कमी आ सकती है। अतः गृह निर्माण के क्षेत्र में मंदी का प्रत्यक्ष असर उपभोग व्यय और सकल घरेलू उत्पाद पर पड़ सकता है। यदि बढ़ती हुई बेरोजगारी के परिप्रेक्ष्य में मकानों की कीमतों में गिरावट आती है, तो जोखिम बहुत ज्यादा है। चूंकि ऋण देने की शर्तों को सख्त करने में सामान्यतया गृहनिर्माण सुधारात्मक कार्रवाई में तीव्रता और आर्थिक उन्नति की गति धीमी करने की संभावना निहित है, इसे एफओएमसी ने 18 सितंबर 2007 को अपनी फेडरल फंड की दर के लिए रखे गए लक्ष्य में 50 आधार अंकों की कटौती करके 4.75 प्रतिशत और पुनः 31 अक्तूबर 2007 को 25 आधार बिन्दुओं तक कटौती की है। बट्टा दर (डिस्काउंट रेट) में भी 17 अगस्त 2007 और 18 सितंबर 2007 को 50 आधार अंकों (प्रत्येक समय) की कटौती करके 5.25 प्रतिशत पर रखा गया ताकि बाजार में चलनिधि की उपलब्धतता और आसान हो सके। हाल ही में फेड फंड दर में की गई कटौती ने पूरे विश्व में वित्त बाजारों को महत्त्वपूर्ण गति प्रदान की है।

6.131 जहाँ तक भारत देश का संबंध है, हाल ही में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में हुई गतिविधियों का कोई प्रभावी प्रभाव भारतीय वित्तीय बाजारों पर परिलक्षित नहीं हुआ। भारत में मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजार की परिस्थितियाँ जैसी थीं वैसी ही बनी रहीं। ऋण बाजार भी अपनी सामान्य गति से चलता रहा। यद्यपि अगस्त 2007 के मध्य में विदेशी मुद्रा बाजार में रुपया पर दबाव महसूस किया गया, बिड-आस्क स्प्रेड फिर भी तंग ही रहा जिससे साफ जाहिर था कि किसी प्रकार की अनिश्चितता और घबराहट नहीं थी। हाँ इन बातों का कुछ प्रभाव ईक्विटी बाजार पर अवश्य देखा गया। जो एफआइआइ जुलाई 2007 में अमरीका के उप-प्रधान दृष्टिबंधक बाजार (सब प्राइम मॉर्टगेज मार्केट) में संकट गहराने के पूर्व भारी-भरकम निवेश कर रहे थे, बाद में विशुद्ध विक्रेता की भूमिका अदा करने लगे। 27 जुलाई 2007 और 14 अगस्त 2007 के दौरान एफआइआइ ने 966.8 मिलियन अमरीकन डॉलर (3920.9 करोड़ रुपए) खींच निकाले। इसके कारण भारत में ईक्विटी बाजार में थोड़ी गिरावट आई। परंतु भारतीय ईक्विटी बाजार में आई यह गिरावट तमाम उन्नत बाजार अर्थव्यवस्थाओं और उभरती हुई बाजार अर्थ व्यवस्थाओं के मुकाबले कम थी। तथापि भारत में ईक्विटी बाजारों ने अगस्त 2007 के मध्य के बाद एफ आइ आइ द्वारा किए गए समर्थन से इन सबसे उबरकर नई ऊँचाइयों को अब प्राप्त किया है। भारी-भरकम मात्रा में पूंजी आप्रवाह के कारण रुपया में भी कुछ सीमा तक मूल्यवृद्धि हुई है।

6.132 जहाँ तक संबंध बैंकों का है, केवल देशी परिचालनों तक सीमित रहनेवालों बैंकों और देश के साथ-साथ विदेश में भी परिचालन करनेवाले बैंकों के बीच विभेद करना आवश्यक है। देशी परिचालनों तक सीमित रहने वाले बैंकों के पास अधिक मात्रा में विदेशी मुद्रा एक्सपोजर नहीं रहता क्योंकि विदेश में निवेश करने के लिए बैंकों के लिए विवेकपूर्ण मानदंड की सीमाएं रखी गई हैं ऐसे बैंकों को इतनी ही अनुमति है कि वे विदेशी संयुक्त उद्यमों मात्र को उधार दें। परंतु जहाँ तक उन बैंकों का संबंध है जो विदेशी परिचालन भी करते हैं, कुछ बैंक ऋण डेरिवेटिवों के प्रति एक्सपोजर रखते हैं और इसमें ज्मार्क टु मार्केटट प्रभाव के खतरे के कारण घाटा भी हो सकता है। तथापि इस प्रकार के एक्सपोजर अत्यल्प हैं और कोई भी भारतीय बैंक अमरीकी उप प्रधान बाजार (सब प्राइम मार्केट) के प्रति सीधे-सीधे एक्सपोजर नहीं रखता। रिज़र्व बैंक वित्तीय बाजारों की अनिश्चितताओं के बारे में बैंकों को और अन्य बाजार साझीदारों को सतर्क करता रहा है।

बॉक्स VI.10: कैरी ट्रेड

करेंसी कैरी ट्रेड विदेशी मुद्रा की खरीद-बिक्री हेतु विशेष सुविधा प्राप्त एक व्यवस्था है, जिसका उद्देश्य ब्याज दरों में अंतर और विदेशी मुद्रा विनिमय की स्थिर दरों से लाभ अर्जित करना है। इस व्यवसाय के अंतर्गत किसी एक मुद्रा में निम्न ब्याज दर पर उधार राशि ली जाती है और किसी दूसरी मुद्रा में अधिक लाभ देने वाली आस्ति खरीदी जाती है। विनिमय दरों या ब्याज दरों में परिवर्तन हो जाने पर कैरी ट्रेड व्यवसाय पर तुरंत असर पड़ता है। हाल के कुछ वर्षों में जापान और न्यूजीलैंड की ब्याज दरों में अंतर आया है, जिससे येन मुद्रा में उधार लेकर (कम ब्याज दर पर प्राप्त मुद्रा) उच्च ब्याज दर वाली मुद्रा (विशेषत: आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड) में आस्तियों की खरीद करके लाभ उठाने का अवसर प्राप्त हुआ। किंतु इस व्यसवाय में चिंता के कुछ विषय भी हैं, जैसे-यदि ब्याज दरों में विपरीत परिवर्तन हुआ जो चलनिधि पर दबाव आएगा, और, यदि इससे बचने के अग्रिम उपाय न किए गए तो आने वाले दिनों में उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं का विकास प्रभावित होगा। फरवरी 2006 में वित्तीय बाज़ारों में जो हल्की सी अस्थिरता उत्पन्न हुई उससे कैरी ट्रेड व्यवसाय पर प्रतिकूल असर पड़ा। फरवरी 2007 में येन की स्थिति में सुधार हुआ जिसका असर सबसे पहले चीन के बाज़ार पर पड़ा। 21 फरवरी 2007 को जापान में नीतिगत दरों में वृद्धि हुई और लाभ में कमी की आशंका से कुछ कैरी ट्रेड व्यवसाय बंद हो गए। कैरी ट्रेड व्यवसाय के बंद हो जाने से वित्तीय स्थिरता को जो जोखिम पहुंचेगा उससे आस्तियों के मूल्यों और विनिमय दरों में तीव्र परिवर्तन होंगे।

6.133 इस चरण पर अभी इस बारे में पक्के तौर पर कोई टिप्पणी करना कठिन है कि वर्तमान समस्या भविष्य में क्या शक्ल लेगी। तथापि, अमरीका में वर्तमान उप-प्रधान दृष्टिबंधक संकट यदि गहराता है, तो उसका असर भारतीय बाजार पर बहुत अधिक नहीं हो सकता। एफआइआइ विशेष रूप से शिथिलता की प्रवृति दर्शाते हैं और अचानक ही निवेश का आहरण करके समग्र औचक स्थिरता (सिस्टेमिक सडेन स्टॉप) की स्थिति पैदा कर देते हैं। एफआइआइ द्वारा निवेश निकालकर घाटे को पूरा करने के लिए अन्यत्र ले जाए जाने की परिस्थिति देश में ईक्विटी बाजार पर और विदेशी मुद्रा दर पर दबाव बनाती है। इसके अलावा अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार में चलनिधि शर्तों में कड़ाई करने के भी परिणाम हो सकते हैं। इनका प्रभाव सरकार पर और हाउसहोल्ड पर सीधे तौर पर नहीं पड़ेगा क्योंकि वे अंतरराष्ट्रीय बाजार से कोई उधार नहीं लेते। हाँ, इसका कुछ प्रभाव कारपोरेट पर अवश्य होगा क्योंकि कुछेक कारपोरेट अपने संसाधनों के लिए अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार से उधार लेते हैं। अतः ऋण शर्तों में कड़ाई करने के प्रभावस्वरूप अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार में इस प्रकार की उधारियों की लागत में वृद्धि हो सकती है। बीते हाल के वर्षों में भारतीय कारपोरेट ने लीवरेज्ड बायआउट के द्वारा विदेश में भी बड़े पैमाने पर अभिग्रहण किया है। अल्पावधिक रूप से इसका अधिक प्रभाव परिलक्षित नहीं होगा क्योंकि ये अभिग्रहण पहले से ही टाइअप करके किए गए थे। जोखिम बचाव और ऋण शर्तों को कड़ा करने की ओर निरंतर अग्रसर रहने का कुछ प्रभाव भविष्य में भारतीय कारपोरेट द्वारा किए जानेवाले अभिग्रहण पर हो सकता है। इस प्रकार कुछ प्रभाव तो हो सकते हैं परंतु उनका महत्व अधिक नहीं होगा।

6.134 बड़े पैमाने एफआइआइ द्वारा आहरण भी देशी चल निधि स्थितियों और ब्याज दरों पर प्रभाव डाल सकता है जिसके अनुवर्ती प्रभाव बाजार के सभी भागीदारों, सरकार को भी सम्मिलित करते हुए, द्वारा लिए जानेवाले उधारों की लागत पर देखे जा सकेंगे। तथापि रिज़र्व बैंक का यह प्रयास रहेगा कि वह अपने पास मौजूदा सभी लचीले उपायों को वित्तीय बाजार में स्थिरता कायम करने के लिए उपयोग में लाए। रिज़र्व बैंक ने एक मैकेनिज्म लागू किया है जिससे वैश्विक वित्तीय बाजारों में वर्तमान अस्थिरता के प्रभावों पर सूक्ष्म निगरानी रखी जा सकेगी, यह निगरानी वित्त बाजार की विभिन्न सेगमेंट्स के वास्तविक समय के अनुसार रखी जा रही है। वर्तमान में इसका फोकस वित्त बाजार के विभिन्न सेगमेंट्स में होनेवाली गतिविधियों, जब भी आवश्यक हो, के प्रति उचित समाधान निकालने पर केंद्रित है। इनमें किन्हीं भी गतिविधियों और किसी भी सिस्टेमिक चिंता, जिसमें भुगतान और निपटान के मुद्दे भी सम्मिलित हैं, से निपटने के लिए प्रक्रियाओं और उपायों को व्यवस्थित रूप से रखा गया है। इसकी वित्त बाजार समिति (एफएमसी) जिसके अध्यक्ष उप-गवर्नर होते हैं, की बैठक कम से कम दिन में एक बार (आमतौर पर सुबह) वित्त बाजार खुलने के तुरंत बाद बाजार गतिविधियों को पुनरीक्षा करने के लिए की जाती है। बाजार में बड़े स्तर पर अस्थिरता की स्थिति में एफएमसी की विशेष बैठकें आयोजित की जाती हैं जिसमें एफएमसी स्वयं को प्रसारित करते हुए संकट प्रबंधन समूह (सीएमजी) के रूप में अन्य नियामकों और एक्सचेंजेस के साथ संपर्क में रहती है।

वैश्विक वित्तीय असंतुलन

6.135 ऐसे असंतुलनों को समर्थन देने के लिए आवश्यक हुए वित्तीय प्रवाहों के निर्वाह को ढोते रहने पर चिंता के मद्देनज़र वैश्विक असंतुलन भी वित्तीय स्थायित्व के प्रति जोखिम उत्पन्न करते हैं। अमरीका का चालू खाता घाटा 2004 और 2006 के मध्य 640 बिलियन अमरीकी डालर (सकल घरेलू उत्पाद का 5.5 प्रतिशत) था जो 2006 में बढ़कर 812 बिलियन डॉलर (सकल घरेलू उत्पाद का 6.2 प्रतिशत) हो गया। यद्यपि अमरीका का चालू खाता घाटा 2007 की पहली तिमाही में कम होकर 770 बिलियन डॉलर (वार्षिक दर से) पर था, तथापि यह सतत रूप से चिंता का विषय बना रहा।

6.136 अमरीका के चालू खाते के घाटे, जो सकल घरेलू उत्पाद से 6 प्रतिशत अधिक है, की भरपाई वर्तमान में निर्धारित आय प्रवाह से की जा रही है जिसमें ट्रेजरी बांड, एजेंसी बांड और कारपोरेट बांड सम्मिलित हैं। अमरीका के चालू घाटे की भरपाई प्रवृति को समर्थन कर रहे तमाम कारकों में से सर्वाधिक प्रमुख है कई देशों के द्वारा सरकारी विदेशी मुद्रा का जमाव करना। अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष के अनुमान से पता चलता है कि अमरीका के सकल घरेलू उत्पाद के प्रति चालू खाता घाटे को 1 प्रतिशत से कम करने अर्थ होगा अमरीकी डालर में 10-20 प्रतिशत[12] की रेंज में वास्तविक मूल्यह्रास। अधिशेष वाले देशों में वृद्धि प्रक्रिया को जारी रखने के लिए सकल मांग को पुनः संतुलित करने की आवश्यकता होगी। अमरीकी चालू खाते में भारी घाटा अनिश्चितकाल तक नहीं रह सकता क्योंकि सरकारी ऋण की सर्विस का भुगतान करने की इसकी योग्यता और विदेशियों के द्वारा स्वयं के संविभाग में अमरीकी आस्ति रोक रखने की इच्छा, दोनों ही सीमित है।[13]

6.137 यदि वैश्विक वित्तीय असंतुलनों में गैर-सिलसिलेवार समायोजन किए जाते हैं तो वैश्विक अर्थव्यवस्था और वित्तीय बाजारों

[12] आइएमएफ (2007), वर्ल्ड इकोनोमिक आउटलुक अपडेट, जुलाई www.imf.org

[13] बेरनांके, बी एस (2007) ग्लोबल इंबैलेंसेज, रीसेंट डेवलपमेंट्स एंड प्रास्पेक्ट्स, सितंबर www.federalreserve.gov.

पर इसके गंभीर प्रभाव होंगे। इन परिस्थितियों में बड़े पैमाने पर संविभागीय परिवर्तन प्रभावी होंगे जिसके फलस्वरूप विदेशी मुद्रा दरों, चलनिधि शिफ्ट्स ब्याज दरों में तीव्र समायोजन और आस्ति कीमतों में समायोजन किए जाएंगे। आस्ति कीमतों में परिवर्तन का प्रभाव चलनिधि स्थितियों और वित्तीय स्थायित्व पर होगा।

6.138 वैश्विक वित्तीय असंतुलनों के अचानक जोर पकड़ने के कारण अन्य उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के जैसे ही भारत पर भी प्रतिकूल प्रभाव होगा। तथापि यह प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों जैसे सरकार, कारपोरेट क्षेत्र और बैंकिंग सिस्टम पर अलग-अलग रूप में पड़ सकता है।

6.139 सर्वप्रथम तो भारत सरकार अपने राजकोषीय घाटे की भरपाई के लिए अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार से संसाधनों के लिए उधार नहीं लेती। तथापि घरेलू ब्याज दरों पर बाह्य गतिविधियों का स्पिल ओवर प्रभाव हो सकता है। घरेलू ब्याज दर में वृद्धि जब तक होती है, सरकार के द्वारा लिए जानेवाले उधार की लागत में वृद्धि हो सकती है। तथापि अधिकतर बकाया सरकारी ऋण स्थिर दर पर है न कि अस्थिर दर पर। अतः सरकार के उधार की लागत में वृद्धि वृद्धिशील रहेगी।

6.140 द्वितीय, वैश्विक वित्तीय बाजार में निवेशक का भरोसा डगमगाने के कारण कारपोरेट ऋण पर स्प्रेड अचानक बढ़ सकता है। भारतीय कारपोरेट्स अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार से संसाधनों के लिए उधार लेने में अब आगे हैं, पहले की तुलना में। घरेलू बाजार में ब्याज की दरों में वृद्धि के कारण कारपोरेट के लिए उधार प्राप्त करने की लागत में भी वृद्धि हो सकती है। इस प्रकार जब तक घरेलू बाजार में ब्याज दरें बढ़ती रहेंगी तब तक कारपोरेट्स, अन्य दायित्वों की तुलना में ऋण के प्रति अपने एक्सपोजर की निर्भरता तक इससे प्रभावित होंगे।

6.141 तृतीय, भारत में बैंक अपने महत्वपूर्ण निवेश सरकारी और अन्य निर्धारित आय वाली प्रतिभूतियों में करते हैं। यह भी कि इस प्रकार के अधिकतर निवेश ज्परिपक्वता तक धारितट श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार घरेलू ब्याज दर में वृद्धि केवल निवेश के एक छोटे अंश में मार्क् ड टू मार्केट का प्रभाव छोड़ेगी। यह भी कि संपूर्ण बैंकिंग क्षेत्र को लगभग 12 प्रतिशत के सीआरएआर के सुविधाजनक स्थान पर रखा गया है। अतः एकल बैंकों के स्तर पर 82 बैंकों में से 79 ने 10 प्रतिशत से अधिक सीआरएआर प्राप्त कर रखा है। अतः भारत में बैंक आमतौर पर ब्याज दर में थोड़ी वृद्धि को झेल सकने की स्थिति में हैं।

6.142 चौथे, भारत में बैंक आस्ति बाजार में निवेश के लिए ऋण दे रहे हैं। अन्य कई अर्थव्यवस्था की तरह भारत में आस्ति मूल्य हाल के वर्षों में तेजी से बढ़े हैं। यदि आस्ति मूल्यों में तेजी से ह्रास हुआ होता तो बैंकों के तुलन पत्रों को ऋण जोखिम का सामना करना पड़ता। सामान्य रूप में ब्याज दरों में बढ़ोतरी आवास मूल्यों पर प्रभाव डालती है और हाउसहोल्ड के तुलन पत्र को ब्याज दर जोखिम का सामना करना पड़ता जिससे बैंकों को कुछ ऋण हानि हो सकती थी। वर्तमान में आवास ऋणों में बैंकिंग क्षेत्र का निवेश उनके समग्र पोर्टफोलियो की तुलना में बहुत अधिक नहीं है और सामान्य रूप में बैंकों ने आवास क्षेत्र को उधार देते समय एक मजबूत मार्जिन रखा है। अतः बैंकों के तुलन पत्र पर प्रभाव को नजर अंदाज किया जा सकता है।

6.143 अंत में मुद्रा के अव्यवस्थित पुनःसमायोजन से भूसंपदा क्षेत्र में जटिलताएं हो सकती थी। मुद्रा के महत्व को पुनसमायोजन और ब्याज दरों में वृद्धि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में व्यय पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती थी जिससे वैश्विक विकास में कमी हो सकती थी। इससे निर्यात अवसरों में कमी आई और भारत के लिए निवेश मांग में भी कमी हुई। मुद्रा का पुनः समायोजन करते हुए कुछ प्रभाव हो सकते थे क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था अधिकांशतःघरेलू मांग पर आधारित है। भारत निर्यात समूह अस्पष्ट रूप से विविधिकृत है। इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था पर समग्र प्रभाव महत्वपूर्ण नहीं हो सकता है।

आस्ति मूल्य समायोजन के जोखिम

6.144 वैश्विक वित्तीय बाजारों में आस्ति मूल्य गतिविधियों में हाल के वर्षों में विशेषतः वित्तीय स्थिरिता के दृष्टि से अधिक महत्व प्राप्त किया है। सांस्थिक निवेशकों को की बड़ी संख्या बढ़ती हुई मात्रा में मूल्य-वर्गांकित विदेशी मुद्रा में सारे देशों में आस्तियां अर्जित कर रही है। यद्यपि आस्ति मूल्य-वर्गांकित विदेशी मुद्रा विनिमय दर परिवर्तनों के अतिरिक्त जोखिम के अधीन है, अंतरराष्ट्रीय निवेशक इन आस्तियों को उच्चतर लाभ के कारण खरीदते हैं। ये प्रतिलाभ विवेधक ब्याज दरों अथवा कुछ देशो में आस्तियों के त्वरित मूल्यांकन के कारण समस्त देशों में बदलते रहते हैं । कभी-कभी विवेधक ब्याज और मूल्यांकन दर विनिमय दर जोखिम से अधिक हो जाते हैं अथवा कुछ मामलों में कुछ मुद्राओं के संबंध में अंतरराष्ट्रीय निवेशकों के लिए विनिमय दर काफी अनुकूल हो जाती है। ऐसे मामलों में उच्चतर प्रतिलाभ देने वाले देशों में पूंजी का प्रवाह एक लगातार जारी आधार पर बढ़ता रहता है और मांग आपूर्ति स्थितियों के अनुरूप अस्तरों पर इन देशों में आस्ति मूल्यों में और बढ़ोत्तरी करता। ऐसी स्थितियों में आस्तियों के मूल्य वित्तीय बाजारों में एक अव्यवस्थित वातावरण के आधार पर आघातों के सृजन करते हुए अतिसंवेदनशल हो जाते है। मांग आपूर्ति स्थितियों के बाहर मूल्यों में बहुतरी की सीमा तथा आघातों के स्वरूप के आधार पर आस्तियों के मूल्यों में समायोजन वित्तीय स्थिरता के लिए घातक हो सकते हैं।

बॉक्स VI.11: व्यवस्थागत आकस्मिक रोक (सिस्टमिक सडन स्टॉप)

किसी देश की अर्थ-व्यवस्था की मूलभूत कार्यप्रणाली से असंबद्ध किन्हीं कारणों से यदि पूंजी प्रवाह में व्यापक और बड़ी मात्रा में अचानक गिरावट आती है, जिससे उस देश की आर्थिक गतिविधियों पर बहुत बुरा असर पड़ता हो तो उसे 'सडन स्टॉप' कहा जाएगा। 'सडन स्टॉप' की संकल्पना गुइलेरमो ए. कालवो ने प्रचलन में लाई, जिनके अनुसार कई देशों में अनुकूल वैश्विक परिवेश और निम्न ब्याज-दरों जैसे बाहरी कारकों के कारण बड़ी मात्रा में पूंजी का आगमन होता है। यदि इन बाहरी कारकों में सौम्य या तीव्र परिवर्तन होता हैं तो उभरती बाज़ार व्यवस्थाओं में पूंजी प्रवाह का रुख अचानक पलट सकता है। इसके बाद कई संकटों को ही 'सडन स्टॉप' कहा गया (जेम्स 2007)। संकट के दौरान इस समस्या की व्यापक गंभीरता को प्रकाश में लाने के लिए कभी कभी इसे '3 एस' (अर्थात् सिस्टमिक सडन स्टॉप) भी कहा जाता है।

पूंजी अंतर-प्रवाह में कमी आ जाने से वास्तविक अर्थव्यवस्था पर असर तो पड़ता ही है, किंतु आर्थिक ढांचे की बनावट, अस्थिरता का सामना करने का अनुभव, संस्थाओं और नीतियों के आधार पर संकट के उभरने के अवसर और उत्पादन में गिरावट की मात्रा अलग-अलग देशों में अलग-अलग हो सकती है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में जिन अर्थ-व्यवस्थाओं को 'ओरिजिनल सिन' के नाम से जाना जाता है, अर्थात जिन पर स्वर्ण या विदेशी मुद्रा में बाहरी और आंतरिक ऋण है, वे 3 एस के प्रति अधिक संवेदनशील हैं (बोर्डो, 2007)।

काल्वो, इज़केर्दो और तल्वी (2007) के अनुसार पूंजी अंतर-प्रवाह के संबंध में 'सडन स्टॉप' और वित्तीय संकट का कारण 'डोमेस्टिक लाएबिलिटी डॉलराइजेशन (डीएलडी) और बड़ी मात्रा में चालू खाता घाटा (करंट अकाउंट डेफिसिट - सीएडी) हो सकता है जिसका असर आउटपुट पर पड़ता है। डीएलडी का अर्थ है घरेलू बैंकों द्वारा जारी विदेशी मुद्रा ऋण, जो जीडीपी का हिस्सा हैं। ये ऋण जोखिम युक्त होते हैं क्योंकि 3 एस की संकल्पना बड़ी राशि के वास्तविक अवमूल्यनों ने जुड़ी है। विदेशी मुद्रा के ऋणों की चुकौती में चूक होने की अधिक संभावना है। दूसरी ओर, चालू खाता घाटा (जो घरेलू व्यापार उपयोगी उत्पादन का हिस्सा है) भी जोखिमपूर्ण है क्योंकि 3 एस के कारण तीव्रता से चालू खाते का समायोजन करना पड़ता है जिससे व्यापार उपयोगी उत्पादनों में कमी आने से मूल्यों में बहुत अधिक परिवर्तन आ सकते हैं। इसका असर वास्तविक विनिमय दर और वित्तीय बाज़ार पर पड़ेगा। 'सडन स्टॉप' के नाम से जाने वाले कुछ संकट इस प्रकार हैं : टेकिला संकट (अर्जेंटीना, 1995; मेक्सिको, 1995; और तुर्की, 1995), पूर्व एशिया संकट (इंडोनेशिया, 1998; मलेशिया, 1998; और थाइलैंड 1998), 1990 के अंत में आया रूस का संकट तथा 1980 के दशक में उभरा लेटिन अमेरिका का ऋण संकट (अर्जेंटीना, 1982; ब्राजील, 1983; चिली, 1983; मेक्सिको, 1983; पेरू, 1983; वेनेजुएला, 1983; और उरूग्वे, 1984)।

संदर्भ :

काल्वो, जी.ए. इज़केर्दो, ए. तथा तल्वी, ई (2006), फीनिक्स मिरेकल्स इन इमर्जिंग मार्केट्स; रीकवरिंग विदाउट क्रेडिट फ्रॉम सिस्टमिक क्राइसेस; बीआईएस वर्किंग पेपर नं. 221; www.bis.org.

बोर्डो, एम.डी. (2006) सदन स्टॉप्स, फिनांशियल क्राइसेस एण्ड ओरिजिनल सिन इन इमर्जिंग कंट्रीज: डेजा वू ? सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया पर्चा : ग्लोबल इम्बैलेंसेस एण्ड रिस्क मैनेजमेंट। हैज दी सेंटर बिकम दी पेरिफेरी ? मैड्रिक स्पेन, मई 16-17 2006।

जेम्स एल. आर (2007), ए मास्टर ऑफ थियरी एण्ड प्रैक्टिस; फिनान्स एण्ड डेवलपमेंट, आइएमएफ; मार्च 2007, 44 (1)।

विशेष रूप से आस्तियों के मूल्य में एक तीव्र समायोजन से पूंजी प्रवाहों से दिशा प्रतिकूल हो सकती है और चलनिधि संकट तथा तीव्र विनिमय दर समायोजन उत्पन्न हो सकते है (बॉक्स VI.11)। इससे बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं के तुलन-पत्र इन आस्तियों में उनके निवेश के आधार पर प्रभावित हो सकते हैं। हाल की अवधि में कई देशों में बढ़ती हुई मांग में घरेलू वित्तीय आस्तियों की उपलब्धता में काफी बढ़ोत्तरी की है जिससे आस्ति मूल्यों, तीव्र ऋण वृद्धि और मुद्रा मूल्यांकन[14] में तेजी से वृद्धि होती है।

6.145 पिछले कुछ वर्षों में भारत के ईक्विटी बाज़ार में भी उछाल आया है। चालू वर्ष में मार्च 2007 के अंत की तुलना में बेंचमार्क बीएसई सूचकांक में 48.4 प्रतिशत और मार्च 2006 के अंत 74.6 प्रतिशत वृद्धि हुई। इस उछाल के अनेक में से एक कारण विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा किया गया भारी निवेश है। विदेशी संस्थागत निवेशकों ने वर्ष 2007-08 के दौरान अब तक (19 अक्तूबर 2007 तक) कुल 15.1 बिलियन डॉलर का निवेश किया जो 2005-06 के पूरे वर्ष में किए गए निवेश का लगभग 163 प्रतिशत है। यद्यपि समष्टिगत आर्थिक ढांचा मजबूत है और कार्पोरेट आय सुदृढ़ है, फिर भी घरेलू आस्तियों की सीमित आपूर्ति के चलते विदेशी संस्थागत निवेशकों की भारी मांग से ईक्विटी बाज़ार में मूल्यांकन प्रक्रिया पर दबाव पड़ रहा है। पी/ई अनुपात, जो फरवरी 2006 में 18.6 था वह सितंबर 2007 के अंत तक बढ़कर 22.6 प्रतिशत हो गया।

6.146 अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय बाजारों में हुई हाल की गतिविधियों ने कई मामले सामने लाए हैं। विशेष रूप से इसने बैंकों द्वारा जोखिम के आकलन और निगरानी के तरीके को सामने लाया है। तरलता जोखिम बैंकों की पारंपरिक तौर की है। तथापि, बैंकों द्वारा हाल ही के संकट के दौरान सामना की गई तरलता जोखिम ने इस बात की आवश्यकता को रेखांकित कर दिया कि तरलता जोखिम का प्रबंध अधिक सावधानी से करना होगा और तरलता जोखिम को समग्र जोखिम आकलन से जोड़ना होगा। इसने बासेल II रूपरेखा की कमियां भी उजागर कर दीं जिनमें ऋण जोखिम, बाजार जोखिम और परिचालन जोखिम शामिल है किंतु तरलता जोखिम शामिल नहीं है। इसके अलावा, ऐसे और भी मामले हैं जहां ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि वित्तीय प्रणाली का सुगमता से कार्य करना सुनिश्चित किया जा सके (बॉक्स VI.12)।

[14] आइएमएफ (2007) ग्वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, अप्रैल 2007।

बॉक्स VI.12: वैश्विक वित्तीय बाज़ार की हाल की गतिविधियां : सबक

हाल में, सब प्राइम मार्केट संकट के चलते ऋण और बाज़ार जोखिम में वृद्धि हुई है और वित्तीय बाज़ार अधिक अस्थिर बन गए हैं। अत्यधिक लीवरेजिंग के कारण वैश्विक वित्तीय प्रणाली अधिक संवेदनशील बन गई है। चलनिधि स्थिति में भारी परिवर्तनों के कारण जोखिमों का मूल्यांकन करना कठिन और अनिश्चित जान पड़ रहा है।

भविष्य में होने वाले दबावों का सामना करने के लिए वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ बनाना होगा जिसके लिए निजी क्षेत्रों, नियामकों और पर्यवेक्षी संस्थाओं के लिए कुछ सबक तैयार किए जा सकते हैं। यद्यपि वर्तमान घटनाचक्र का अंतिम रूप से क्या असर पड़ेगा यह ज्ञात नहीं है, और इतनी जल्दी किसी निष्कर्ष पर पहुंचना भी कठिन है, इसलिए कुछ क्षेत्रों की ओर अधिक ध्यान देना आवश्यक है। इसके लिए निम्न लिखित सबक अपनाया जा सकता है:

(i) बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय बाज़ारों का सुगमतापूर्वक परिचालन मुख्यतया विश्वास, साख और पारदर्शक सूचनाओं की उपलब्धता के कारण चलता है। वित्तीय प्रणाली के अंतर्गत जोखिम बांटने की पारदर्शिता में कमी आई है, जिसके चलते आधिकारिक एजेंसियों के समक्ष यह प्रश्न उठा है कि इस पारदर्शिता को पुन: कैसे बढ़ाया जाए। बचाव निधियों के बारे में हाल में जो चर्चा हुई उसका केंद्र बिंदु यही था। जोखिम को पहचानने और उसके उचित मूल्यांकन के लिए बाज़ार में निहित जोखिम के बारे में सटीक और समयोचित जानकारी मिलना बहुत आवश्यक है। विशेषकर जोखिम अंतरण के क्षेत्र में, जोखिम का प्रबंधन, मूल्यांकन एवं जवाबदेही कैसे तय करें कि गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों सूचना इसमें शामिल हो सके। प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं और उनके तुलन पत्र के इतर साधनों के मध्य संपर्क के लिए अत्यधिक पारदर्शिता आवश्यक है। सूचना की मात्रा एवं जटिलता एवं इसे उपलब्ध करवाने की लागत को देखते हुए, भविष्य में ऐसी घटनाओं से बचने के लिए आवश्यक प्रकटीकरण एवं उचित राशि के बारे में सावधानी से विचार किया जाना आवश्यक होगा।

ii) जबकि प्रतिभूतिकरण एवं वित्तीय नवोन्मेष ने बढ़े हुए जोखिम वितरण के माध्यम से बाजार को अधिक दक्ष बनाया है, वर्तमान परिस्थिति में उनकी भूमिका को अच्छी तरह समझना होगा। संरचित उत्पादों के संपूर्ण आपूर्ति श्रृंखला के नियंत्रण एवं संतुलन के मध्य संबंधों पर थोड़े पुनर्विचार की आवश्यकता हो सकती है। इस प्रकार, भविष्य में जब स्थिरता स्थिति का मूल्यांकन किया जाए, पूर्व की अपेक्षा अब यह ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है कि नए लिखतों की उचित जांच एवं मूल्यांकन, नए सहभागियों की प्रवृत्ति के विश्लेषण के साथ किया जाना चाहिए। वित्तीय प्रणाली का न केवल विस्तार हो रहा है बल्कि यह जटिल भी होती जा रही है, इस तथ्य से निपटने के लिए यही सबसे अच्छा उपाय दिख रहा है।

iii) ऋण व्युत्पन्नियों एवं संरचित उत्पादों के जोखिम विश्लेषण एव श्रेणी-निर्धारक एजेसियों की भूमिका की जांच भी आवश्यक है। तथापि, वित्तीय बाजार की कार्यप्रणाली में श्रेणी निर्धारण एवं श्रेणी निर्धारक एजेंसियों की महत्वपूर्ण भूमिका पर कुछ चिंताएं हैं, ये चिंताएं जटिल उत्पादों विशेषकर जब बहुत भिन्न संरचना, संकल्पना एवं चलनिधि विशेषताओं वाली प्रतिभूतियों को एक समान श्रेणी-निर्धारण दिए जाने के श्रेणी-निर्धारण तरीकों के संबंध में है।

iv) जहाँ विश्वसनीय बाजार मूल्य उपलब्ध कराने में चलनिधि अपर्याप्त है वहाँ बाजार के संदर्भ में जटिल उत्पादों के मूल्यांकन के मुद्दे की जांच भी आवश्यक है। जटिल उत्पादों को खरीदते वक्त निवेशकों को संबद्ध चलनिधि पहलुओं और मूल्य के भाग के तौर पर चलनिधि जोखिम ञ्प्रीमियमट पर विचार करना पड़ सकता है। ऐसी प्रतिभूतियों को संपार्श्विक के तौर पर रखने वाली वित्तीय संस्थाओं को चलनिधि में ञ्हेयरकटट का प्रावधान भी करना होगा।

v) बैंकों के लिए जोखिम समेकन से संबंधित परिमाप सामान्य लेखांकन या विधि परिमाप से बड़ा सिद्ध हुआ है। उदाहरण के लिए (क) साखगत जोखिम बैंकों को कानूनी तौर पर स्वतंत्र इकाइयों को आंतरिक हानि के लिए विवश कर सकती हैं; और (ख) नई लिखतें एवं संरचनाएं, तुलन-पत्र से इतर एवं आकस्मिक देयताओं को ढ़क सकती है। इसका परिणाम यह होता है कि वह जोखिम जो वितरित हुआ प्रतीत होता था वह विभिन्न रूपों में वितरित करने वाले बैंक के पास वापस आ सकता है। संबंधित परिमाप केवल पर्यवेक्षी मुद्दा नहीं है, लेकिन वित्तीय संस्थाओं के लिए - उनका जोखिम प्रबंधन प्रणाली, लेखा -परीक्षा प्रक्रिया एवं आंतरिक निरीक्षण एवं शासन संरचनाएं हैं।

vi) नीति निर्धारकों को भी कुशल संतुलनकारी कार्रवाई करनी पड़ सकती है क्योंकि उन्हें ऐसा ढ़ाचा तैयार करना होता है जो अच्छे समय के साथ-साथ बुरे समय में भी निवेशकों के उच्च ऋण मानकों को बनाए रखने तथा जोखिम प्रबंधन प्रणालियेां को मजबूत बनाने के लिए प्रोत्साहित करे। वैश्विक वित्तीय एवं मौद्रिक स्थितियों में व्याप्त अति अनिश्चितताओं के प्रति उचित तरीके से प्रतिक्रिया देने में सक्षम बनाने के लिए ज्यादा सर्तकता बनाए रखने की भी आवश्यकता है ।

(vii) संपार्श्विक के बाजार मूल्य पर अधिक वस्तुनिष्ठ जानकारी निकालने की आवश्यकता है, विशेष रूप से ऐसी स्थिति में जहां ऐसी जानकारी ऑन लाइन आधार पर उपलब्ध न होने से संपार्श्विक बाजार के प्रति पूर्णत: चिह्नित नहीं किए जाते। संकट ने इस मुद्दे को भी उभारा कि क्या हाय फ्रिक्वेंसी आधार पर मूल्य उपलब्ध न होनेवाली कुछ प्रकार की आस्तियों को बाजार के प्रति चिह्नित करने की सीमा है?

(viii) ऋण बाजार में उत्पन्न होने वाली समस्या तेजी से मुद्रा बाजारों और ऋण बाजारों तक फैल जाती है जिससे बाजार के विभिन्न घटक अत्यधिक एकीकृत हो गए हैं। इससे विकसित देशों में वित्तीय बाजारों पर निगरानी बढ़ाने की आवश्यकता रेखांकित हो गई। इसके अलावा, जहां वित्तीय बाजारों का वैश्विक बनना बढ़ता जा रहा है, वहीं वित्तीय बाजारों का विनियमन राष्ट्रीय बना हुआ है। इस खामी पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

रिज़र्व बैंक ने बैंकों में विद्यमान संचालन मानक, जोखिम प्रबंधन प्रणाली और प्रोत्साहन रूपरेखा को ध्यान में रखकर वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त रक्षोपाय स्थापित किया है। इन प्रगामी नीतियों ने वित्तीय प्रणाली की कार्यकुशलता और स्थिरता दोनों में योगदान दिया है।

संदर्भ :

आइएमएफ, (2007), वैश्विक वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, सितंबर

मोहन राकेश, (2007), 'नई वित्तीय बाजार गतिविधियां एंव मौद्रिक नीति के लिए निहितार्थ (www.rbi.org.in)

रेम्सपर्गर, हरमैन, (2007), 'यूरोपीय दृष्टि से वर्तमान वित्तीय स्थिरता', ड्यूश बुंदेश बैंक, जून,

डॉज, डेविड, (2007) 'ऋण बाजारों में अस्तव्यस्तता - कारण, प्रभाव एवं सीखने की बातें:, बैंक ऑफ कनाडा, सितंबर

7. समग्र मूल्यांकन

6.147 घरेलू स्थितियों में समुचित रूप में ढलने वाले अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम व्यवहारों के अनुरूप, वित्तीय क्षेत्र को मजबूत करने के लिए रिज़र्व बैंक अनेक उपाय कर रहा है। इन प्रयासों के फलस्वरूप भारत में मजबूत, गतिशील एवं लचीला बैंकिंग क्षेत्र उभरा है। परिचालनगत दक्षता और सुदृढ़ता संकेतकों की दृष्टि से भारतीय बैंकिंग प्रणाली की तुलना अब वैश्विक मानकों के साथ की जा सकती है। उठाए गए विभिन्न कदमों से वित्तीय बाजार के विभिन्न खंड़ों की गंभीरता और चलनिधि में भी वृद्धि हुई है। संस्थागत उपायों एवं नवीनतम प्रौद्योगिकी ने भुगतान और निपटान प्रणालियों की दक्षता में सुधार लाया है। आरटीजीएस के लागू होने से प्रणालीगत जोखिम के प्रमुख स्रोत में कमी आई है ।

6.148 पिछले कुछ वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता में बहुत ज्यादा लचीलापन आया है । ब्याज दर चक्र में तेजी के बावजूद बैंक लाभ में रहे हैं। आय और व्यय के विभिन्न घटकों का विश्लेषण यह दर्शाता है कि भारत में बैंक अपनी अधिकतर आय दीर्घकालिक मूल व्यवसाय स्रोत से प्राप्त करते हैं, जिसमें उनकी आय की मज़बूती का पता चलता है।

6.149 पिछले कुछ वर्षों से भिन्न, वर्ष के दौरान एनपीए की वसूली की तुलना में नई चूकें (स्लिपेज) ज्यादा थीं। हालांकि, एनपीए औसत (सकल/निवल ऋणों एवं अग्रिमों के प्रतिशत के तौर पर सकल एनपीए और निवल एनपीए) में कमी आई है और बैंक अपनी आस्ति गुणवत्ता के संबंध में आश्वस्त हैं। बैंकिंग क्षेत्र की पूँजी स्थिति मजबूत बनी रही क्योंकि जोखिम भारित आस्तियों में बढ़ोतरी के साथ-साथ पूँजी निधियां भी बढ़ी हैं। बैंकों ने सीआरएआर को 9 प्रतिशत के निर्धारित मानदडों से काफी अधिक रखना जारी रखा। मार्च 2007 के अंत तक, 79 बैंकों (82 वाणिज्य बैंकों में से) ने 10 प्रतिशत एवं उससे अधिक सीआरएआर बनाए रखा और दो बैंकों का सीआरएआर 9-10 प्रतिशत के बीच रहा। निर्धारित मानदंडों से कम सीआरएआर केवल एक बैंक का था। इस प्रकार, सामान्यतः, भारत में बैंक बासेल II की पूँजी आवश्यकताओं को पूरा करने की अच्छी स्थिति में है जो मार्च 2009 वर्ष के अंत से सभी बैंकों पर लागू होगा। यह बैंकिंग क्षेत्र के जोखिम प्रबंधन में सुधार लाएगा ।

6.150 कुछ ऐसे अल्पावधि से मध्यावधि जोखिम हैं जिनका सामना बैंकों को करना पड़ता है। बैंकों के समक्ष आ रहे दो बड़े जोखिम अर्थात ऋण जोखिम और बाजार जोखिम हैं। निकट भविष्य में बैंक सौम्य ऋण जोखिम वातावरण का सामना करते रहेंगे। तथापि, बैंकों को कुछ सीमा तक बाजार जोखिम का सामना करना पड़ता है, हालांकि उन्होंने पिछले कुछ वर्षों में बाजार जोखिम के प्रति अपने एक्सपोजर को कम किया है।

6.151 अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ समष्टि आर्थिक संकेतकों से निकट भविष्य में सौम्य ऋण जोखिम वातावरण तैयार होता है। पिछले चार वर्षों के दौरान वास्तविक जीडीपी के वृद्धि दर का औसत 8.6 प्रतिशत था, 2007-08 में वृद्धि अच्छी बनी रहने की आशा है, 2007-08 की पहली तिमाही में 9.4 प्रतिशत की मजबूत वृद्धि हुई। औद्योगिक क्षेत्र ने अपनी वृद्धि गति बनाए रखी, हालांकि जुलाई और सितंबर 2007 में उसमें कुछ मंदी आई थी। सेवा क्षेत्र के विभिन्न मुख्य संकेतक इशारा कर रहे हैं कि यह क्षेत्र अच्छा प्रदर्शन करता रहेगा। मुद्रास्फीति दर जनवरी 2007 के 6.7 प्रतिशत की उच्च दर से गिरकर 3.1 प्रतिशत रह गई और मार्च 2007 के अंत में 5.9 प्रतिशत हो गई। हालांकि कच्चे तेल की कीमतों में नई वृद्धि के कारण मुद्रास्फीति की कम दर पर दबाव आ सकता है। उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति सितंबर में (वर्ष-दर-वर्ष आधार पर) कम हुई है, हालांकि यह ऊँचे स्तर पर बनी हुई है। पिछली फरवरी 2007 से अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतों में लगभग 53 प्रतिशत तक उछाल आया जब प्रशासित घरेलू तेल की कीमतों में कमी की गई । यदि अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतों में और वृद्धि होती तो घरेलू तेल की कीमतों में भी वृद्धि करनी पड़ेगी जिससे घरेलू मुद्रा स्फीति पर असर पड़ा होता । इसके बावजूद, निकट भविष्य में मुद्रास्फीति के संतोषजनक सीमा में रहने के आसार हैं। भारत का बाह्य क्षेत्र मजबूती का प्रमुख स्रोत बना हुआ है। यद्यपि 2006-07 और 2007-08 की पहली तिमाही में व्यापार घाटे में वृद्धि हुई व्यापार घाटे के बड़े भाग का प्रतितुलन अदृश्य मदों द्वारा किया जा रहा है। इसके अलावा, भारत में लगातार बड़े पूंजी प्रवाह आ रहा है जिसके फलस्वरूप विदेशी मुद्रा भंडार में तेजी से वृद्धि हुई है। हाल के समय में भारतीय वित्त बाजार ने हाल की प्रतिकूल अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों के प्रति लचीलापन दिखाया है। भारत में ब्याज दरें बढ़ी हैं और एएए श्रेणी वाले कारपोरेट बांड और जोखिम मुक्त सरकारी बांड के मध्य ब्याज दर अंतर में वृद्धि हुई है। फिर भी, वित्तीय स्थिति कुल मिलाकर ठीक है। घरेलू पूंजी बाजार में तेजी का माहौल है और कंपनियों के पास अतरराष्ट्रीय पूंजी बाजार से संसाधन जुटाने का लचीलापन भी है। कारपोरेट क्षेत्र ने उच्च लाभप्रदता को लंबे समय तक अनुभव किया है। तीव्र समष्टि आर्थिक स्थितियों के कारण यह आशा कि जाती है कि निकट भाविष्य में कारपोरेट उच्च लाभप्रदता बनाये रखेंगे। ऋण विस्तार में तेजी बनी रहेगी यद्यपि इसमें थोड़ा धीमापन है। वाणिज्यिक स्थावर संपदा क्षेत्र को दिए जाने वाले ऋण में कमी आई है, परन्तु यह अभी भी ज्यादा है।

पिछले कुछ वर्षों में तीव्र ऋण विस्तार के कारण यह संभव है कि भविष्य में बैंकों की चूक दरों में वृद्धि हो। यह ऋण दिए जाने में धीमेपन से जुड़कर आने वाले वर्षों में बैंक के एनपीए अनुपात में वृद्धि कर सकता है। हालांकि इस तरह की वृद्धि अधिक हाने की आशा नहीं है एवं संपूर्ण रूप से, ऋण जोखिम वातावरण में नरमी बनी रहेगी ।

6.152 तथापि, निकट समय में बैंकों के लिए बाजार जोखिम का थोड़ा खतरा है। ऐसे जोखिमों का प्रमुख स्रोत वित्तीय बाजार हैं। अमेरिकी सब-प्राइम बंधक बाजार में हाल की गतिविधियों ने वित्तीय बाजार में अस्थिरता एवं अनिश्चितता ला दी है। यद्यपि वैश्विक वित्तीय असंतुलन में कमी आयी है, परन्तु यह चिंता का विषय बना हुआ है। यदि वित्तीय बाजार में कोई अनियमित समायोजन होता, यह ब्याज दर एवं चलनिधि विस्थापन में परिर्वतन के द्वारा बैंकिंग क्षेत्र पर भी प्रभाव डाल सकता था । ब्याज दरों में अत्यधिक तेजी बैंकों के निवेश संविभाग में ज्मार्क्ड-टु-मार्केटट हानि ला सकती है। हालांकि, यह देखना महत्वपूर्ण है कि बैंकों का निवेश संविभाग कुल आस्तियों के प्रतिशत की तुलना में मार्च 2005 के अंत के 36.9 प्रतिशत और मार्च 2006 के अंत के 31.1 प्रतिशत से तेजी से घटकर मार्च 2007 के अंत में कुल आस्तियों का 27.5 प्रतिशत रह गया। ब्याज दर में अत्यधिक तेजी आवास मूल्य पर भी कुछ प्रभाव डालेगी और आंतरिक तुलन-पत्र में ब्याज दर जोखिम लाएगी। इससे ऋण हानियों में बढ़ोत्तरी के माध्यम से बैंकों के तुलन-पत्र पर बुरा प्रभाव पड़ेगा ।

6.153 भारत में बैंकों का ईक्विटी बाजार में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष निवेश बहुत कम है। ईक्विटी बाजार में मंदी के मामले में, ईक्विटी मार्केट में निवेश हेतु दिए गए कुछ अग्रिमों को क्षति भी हो सकती है। यद्यपि ईक्विटी बाजार में मंदी के कारण ऋण हानि एवं पूंजी हानि दोनों हो सकती हैं, परन्तु बैंकों के सीमित एक्सपोजर के कारण ईक्विटी बाजार में प्रतिकूल गतिविधि का उन पर बहुत ज्यादा असर नहीं होगा। किंतु स्थावर-संपदा बाजार में बड़े परिवर्तन बैंकिंग क्षेत्र के तुलन -पत्र पर अत्यधिक प्रभाव डाल सकते हैं ।

6.154 अंततः, निकट भविष्य में समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण अनुकूल दिख रहा है और ऋण जोखिम वातावरण पर इसका सकारात्मक प्रभाव जारी रहेगा। हालांकि पिछले तीन वर्षों में तीव्र ऋण वृद्धि के कारण बैंकों के ऋण संविभाग में एनपीए की अत्यधिक चूकें (स्लीपेज) हो सकती हैं। बैंकों के समक्ष बाजार जोखिम है, यद्यपि हाल के वर्षों में ऐसे जोखिमों की मात्रा में महत्वपूर्ण गिरावट आई है। कुछ मामलों में, बाजार सहभागियों के समक्ष आए बाजार जोखिम बैंकों की बहियों में ऋण जोखिम के रूप में परिलक्षित हो सकते हैं। हालांकि, बैंकों के पास सामर्थ्य है कि वे वित्तीय बाजार की प्रतिकूल गतिविधि का सामना कर सकते हैं। बैंकों की लाभप्रदता में सुधार आया है और उनकी पूंजी स्थिति मजबूत बनी हुई है। इस प्रकार, किसी प्रतिकूल गतिविधि से उत्पन्न होने वाली परिस्थिति का सामना करने के लिए बैंकिंग प्रणाली में साधन उपलब्ध हैं। बैंकिंग क्षेत्र के तुलन-पत्र पर मजबूत घरेलू वृद्धि सकारात्मक प्रभाव डालना जारी रखेगी।